रावण-कलाकार

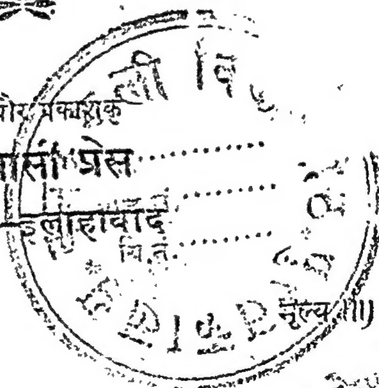


हतो वा प्राप्स्यसि स्वर्गं जित्वा वा भोक्ष्यसे महीम् ।
तस्मादुत्तिष्ठ कौन्तेय युद्धाय कृतनिश्चयः ॥
सुखदुःखे समे कृत्वा लाभालाभौ जयाजयौ ।
ततो युद्धाय युज्यस्व नैवं पापमवाप्स्यसि ॥

२ अ० ३७—३८ श्लोक, श्री मद्भगवद्गीता

लेखक—
साहित्यभूषण
चतुर्वेदी द्वारकाप्रसाद शर्मा





मुद्रक और प्रकाशक
भारतवासी प्रेस
दारागंज—इलाहाबाद

सन् १९३८ ई०

मूल्य ॥)

मुद्रक— प्रतापनारायण चतुर्वेदी, भारतवासी प्रेस, दारागंज-प्रयाग

समझे जा सकते हैं, तो मेकाले ह्वोलर, पोर, होम्स, वेलपोल, आदि पाश्चात्य इतिहासलेखक गण भी भारतीय ऐतिहासिक जटिल घटनाओं के तथ्य निर्णय करने के लिए अवश्य ही प्रमाण मान कर ग्रहण किये जा सकते हैं। यह पुस्तक किन किन पुस्तकों के आधार पर लिखी गयी है, उन पुस्तकों की सूचना अन्यत्र दी गई है। यह बात भी ध्यान देने योग्य है कि, क्लाइव के चरित में जहाँ जहाँ धब्बे हैं उनको लेखक ने साफ़ करने का प्रयत्न नहीं किया, बल्कि उन पुराने और फीके धब्बों को क्लाइव के देशवासियों की दृष्टि से ही देख कर, उनके धुंधले रंग को स्पष्ट कर दिया है जिससे इस पुस्तक के पढ़ने वालों को शिक्षा मिले।

क्लाइव की इस जीवनी से, पाठकों को कितनी लाभप्रद और काम की शिक्षाएँ मिल सकती हैं। क्लाइव ने इस देश में रह कर जो कुछ भले बुरे काम किये यद्यपि उन अच्छे, बुरे कर्म्मों का फल भी आगे पीछे क्लाइव ही ने भोगा; तथापि हमारे पाठकों को यह भलीभाँति समझ लेना चाहिए कि चाहे बड़ा आदमी हो, चाहे साधारण मनुष्य ही क्यों न हो,अधर्माचरण का अन्तिम परिणाम दोनों के लिए समान रूप से सदा शोचनीय ही होता रहा है। चाहे आरम्भ में भलेही किसी की उन्नति ही होती हुई क्यों न दिखलाई पड़े। इतिहास से यह बात स्पष्ट सत्य प्रकट होती है कि, जिन स्वदेशियों ने क्षुद्र स्वार्थ के वशीभूत हो इस देश का अधिकार अधर्म्माचरण से बाहरी लोगों के हाथ में सौंप दिया उनको उन दुष्ट कर्मों का प्रायश्चित्त भी उसी समय करना पड़ा। अमीचन्द, मीरजाफ़र प्रभृति का अन्तिम परिणाम इस बात की साक्षी देता है।

प्रसङ्ग आ पड़ने पर यह बतला देना भी यहाँ आवश्यक जान पड़ता है कि, सब से प्रथम विदेशियों में से भारतवर्ष को कुटिल नीति से अपने अधिकार में कर लेने की इच्छा, भारतवर्षस्थित फ्रेंच गवर्नर डूपले

को हुई थी। इसमें सन्देह नही कि, उस समय राजनैतिक निपुणता में डूपले अद्वितीय था । दक्षिण प्रान्त में उसका प्रभाव भी बहुत था, किन्तु उसमें त्रुटि यही थी कि, वह स्वयं इस देश का स्वतन्त्र शासक बनने की कामना रखता था इसीसे वह स्वदेशी सहयोगियों (लेबोर-डाने आदि) का उत्कर्ष नहीं सह सकता था। डूपले की कुटिल नीति को, उसके स्वार्थपूर्ण कार्यों ने फ्रांस-निवासियां पर प्रकट कर दिया था, अत. फ्राँसवालों ने सदैव डूपले से इस देश में शान्ति बनाये रखने और लड़ाई झगड़ों में सम्मिलित न होने का अनुरोध किया ; डूपले ने जब स्वदेशियों के अनुरोध पर ध्यान न दे कर, मनमाना कार्य किया तब उसके देशवालों ने भी उसे समय पर सहायता देने में अनाकानी करना आरम्भ की। यदि डूपले-क्लाइव की तरह स्वय योद्धा भी होता, तो सम्भव था कि, डूपले अपने इष्ट साधन में देशवासियों की सहायता के विना भी कृतकार्य हो जाता; परन्तु वह स्वय योद्धा नहीं था। अतः अवसर पर सहायता न मिलने से डूपले अपने विचारों को पूरा करने में अकृतकार्य रहा। यदि डूपले को समय पर फ्राँसवाले यथेष्ट सहायता देते तो कभी सम्भव नहीं था कि इस देश पर इंगलेण्ड वालों का अधिकार हो सकता। डूपले के स्वार्थसाधन का लाभ इंग लेण्डवालों ने उठाया।

अन्त में. मैं यह प्रकाश करना भी प्रयोजनीय समझता हूँ कि, मुझे यह आशा कभी नहीं थी कि, मेरी यह रचना कभी किसी प्रेस का मुँह देखेगी और जिस प्रकार बहुत से उत्साही साहित्यसेवियों की रचना बस्तों में बँधी ही रह जाती हैं, वही दशा इस पुस्तक की भी होगी; परन्तु मेरे परम प्रियमित्र और हितैषी बन्धु वैकुण्ठवासी सुदर्शन सम्पादक पं० माधव प्रसाद मिश्र के परामर्श से मैंने इसे "श्रीराघवेन्द्र" में क्रमशः प्रकाशित करना उचित समझा। ईश्वर के अनुग्रह से जो बात प्रथम असाध्य प्रतीत हुई थी, वह आज साध्य हुई है और यह पुस्तक

वर्त्तमान रूप में हिन्दी जाननेवालों की सेवा में उपस्थित करने योग्य हो गई है। मेरे दृष्टिप्रमाद या प्रेस के कम्पोज़िटरों की असावधानी से शुद्ध की हुई भूलें कहीं कहीं ज्यों की त्यों रह गई हैं। मेरा विचार था कि, इस पुस्तक में शुद्धाशुद्ध पत्र लगा कर पुस्तक के इस दोष को दूर कर देता; किन्तु—जब मैं स्वयं अन्य पुस्तकों के शुद्धाशुद्ध पत्रों के अनुसार पुस्तक नहीं शुद्ध करता; तब "आत्मवत् सर्वभूतेषु" न्याय से, अन्य महानुभाव इस कष्ट को उठावेंगे—मुझे ऐसी आशा नहीं। इसीसे उसका देना अनावश्यक समझा। यदि कभी इस पुस्तक के द्वितीय संस्करण का सुखस्वप्न पूरा हुआ, तो इस संस्करण की भूलें दूसरे संस्करण में दूर कर दी जायगी।

प्रयाग
शु० चै० १२ रवौ
सं० १९६४

चतुर्वेदी द्वारकाप्रसाद शर्मा।

द्वितीय संस्करण की भूमिका

सं० १९६४ की मेरी आशा आज सं० १९९३ में अर्थात् लगभग २९ वर्षों बाद पूरी हुई। यह पूरी हुई है भगवान् की निर्हेतुकी कृपा से —मेरे पुरुषार्थ या प्रयत्न से नहीं। राबर्ट क्लाइव की जीवनी का यह द्वितीय संस्करण हिन्दीसंसार की सेवा में उपस्थित किया जाता है। इसका श्रेय भारतवासी प्रेस के अध्यक्ष आयुष्यमान् पं० प्रतापनारायण चतुर्वेदी को है। इन्होंने इसे आग्रहपूर्वक प्रकाशित किया है।

जिन दिनों यह पुस्तक प्रेस में थी, उन दिनों मैं प्रयाग में न था। अतः यह संस्करण प्रथम संस्करण की हूबहू प्रतिलिपि है। इसमें मैंने कुछ भी संशोधन, परिवर्तन अथवा परिवर्द्धन नहीं किया। यहाँ तक कि इसके एक भी फ़र्मे का प्रूफ़ मैं नहीं देख सका।

इस पुस्तक का प्रकाशन क्यों आवश्यक समझा गया— यह बात प्रथम संस्करण की भूमिका में दी जा चुकी है। अतः उसके पिष्ट-पेषण की आवश्यकता नहीं। जिस प्रकार प्रथम संस्करण को देख मेरे हितैषी सुहृद, कृपालु मित्र एवम् शुभचिन्तक महानुभाव प्रसन्न एवम् सन्तुष्ट हुए थे; आशा है, उसी प्रकार इस संस्करण को देख के सन्तुष्ट होंगे।

फणीन्द्र-अनन्त-भवन
छिपैटी-इटावा
ता० २८/८/३६.

चतुर्वेदी द्वारकाप्रसाद शर्मा

तृतीय संस्करण की भूमिका

जिस पुस्तक के प्रथम संस्करण को खपाना कठिन था। जगदीश्वर की कृपा से उसी पुस्तक का यह तृतीय संस्करण आज हिन्दी संसार के सम्मुख उपस्थित किया जाता है। इस पुस्तक के मूललेख में भाषा, भाव और शैली विषयक अनेक परिवर्त्तन किये गये हैं इसलिए कि, इनका करना परमावश्यक था और ये द्वितीय संस्करण ही में हो जाने चाहिये। किन्तु Better late than never (न करने की अपेक्षा विलम्ब से कोई काम करना श्रेष्ठता है) की प्रसिद्ध अंग्रेज़ी कहावत के अनुसार तृतीय संस्करण में होना भी ठीक ही कहा जायगा।

क्लाइव भारत से लौट कर जब घर गया, तब उसने वहां के राजनैतिक वातावरण में अपने को ऊँचा करने का बहुत प्रयत्न किया किन्तु वह अपने इस प्रयास में सफल न हो पाया। उसकी इस असफलता का कारण इतिहास एवम् जीवनी लेखक यह बतलाते हैं उसकी मनोवृत्ति सदैव भारतवर्ष "सम्बन्धी विषयों के विचार की ओर लगी रहती थी" यह कारण अंशतः ही नहीं किन्तु सर्वांश में ठीक भी है। इसके ठीक होने का अकाट्यप्रमाण हमें उस दिन एक सियांस में मिला। सोमवार ता० १८ अप्रैल सन् १९३८ की बात है कि अनाहूत रावर्ट क्लाइव का आत्मा सियांस में प्रकट हुआ। बातचीत के सिलसिले में आपने एक स्थान पर कहा "I often visit India my *loving country.*"

अर्थात् मैं अपने प्यारे देश भारतवर्ष में प्रायः आया करता हूं इससे स्पष्ट है कि, जब पौने दो सौ वर्षों बाद भी क्लाइव के लिए भारतवर्ष उसका प्यारा देश बना हुआ है तब उस समय भी उसके

मानसिक विचारों का केन्द्र इँगलैण्ड न हो कर भारतवर्ष ही था इसमें सन्देह के लिये अवकाश नहीं हो सकता।

आशा है, आवश्यक परिवर्त्तनों के पश्चात् अब यह पुस्तक पहले से भी अधिक मनोरञ्जक और उपयोगी सिद्ध होगी।

इटावा
१०.७.३८

चतुर्वेदी द्वारकाप्रसाद शर्मा

BOOKS OF REFERENCE.

The following are the works, to which the writer acknowledges his great obligation:—

1. Lord Macaulay's, Critical & Historical Essays, contributed to the "Edinburgh Review' Volume II.
2. Malcolm's Life of Lord Clive.
3. Four Heroes of India by F. M. Holmes.
4. Thornton's British Empire in India.
5. Auber's Rise of British Power in India.
6. Maleson's French in India.
7. Orme's Indostan.
8. Martineau's British Rule in India.
9. Wheeler's History of India.
10. Text Book of Indian History, by Dr. G U. Pope[D. D.]
11. Annals of Indian Administration by Dr. Smith.
12. Elphinstone's History of India.

विषय-सूची

प्रथम अध्याय

द्वितीय अध्याय

तृतीय अध्याय

चतुर्थ अध्याय

पञ्चम अध्याय

षष्ठ अध्याय

सप्तम अध्याय

अष्टम अध्याय

नवम अध्याय



॥ श्रीः ॥

रावर्ट क्लाइव

प्रथम अध्याय

अपि मुदमुपयान्तो वाग्विलासैः स्वकीयैः
परिभणितिषु तृप्तिं यान्ति सन्तः कियन्तः ?

(क्लाइव का जन्म-शिक्षा-बाल्यावस्था के चरित्र-कम्पनी में क्लर्कशिप भारत यात्रा ।)

द्वितीय हैनरी के समय से क्लाइव के पूर्वज श्रोपशायर (Shropshire) में रहते थे। रवर्ट क्लाइव के पिता वकील थे, किन्तु विकालत से उनकी आमदनी बहुत कम होती थी। उनके पास थोड़ी सी पैतृक भूमि थी परन्तु उस भूमि की आय भी स्वल्प ही थी। तेरह भाई बहिनों में क्लाइव सब से बड़ा था। उसका जन्म सन् १७२५ ई० की २९वीं सितंबर को स्टिची के अन्तर्गत, मारटनड्रे के मारकेट ड्रेटन में हुआ था। यह स्थान क्लाइव के पिता की पैतृक रियासत के अन्तर्गत है। रावर्ट क्लाइव की माता मैंनचैस्टर-निवासी मिस्टर नेथेनियल-गैस्केल की बेटी थी और वह अत्यन्त बुद्धिमती थी। यदि कहीं रावर्ट को अपनी माता के द्वारा पालित-पोषित होने का सौभग्य प्राप्त हुआ होता, तो वह इतना रोषयुक्त और उद्दण्ड

प्रकृति का न होता। रावर्ट तीन वर्ष का भी नहीं होने पाया था कि वह होपहाल मैनचैस्टर-निवासी मिस्टर वेली के पास भेज दिया गया। माता पिता के निरीक्षण में न रहने से जैसी दशा प्रायः बालकों की हो जाती है, वैसी ही दशा क्लाइव की भी मि० वेली के साथ रहने से हो गई। जिन दिनों क्लाइव मि० वेली के घर में रहता था, उन दिनों उसके ऊपर उन लोगों का आवश्यकता से कहीं अधिक लाड़-प्यार था। हमारे पाठक, भलीभाँति जानते होंगे कि अनुभवी लोगों का कथन मिथ्या नहीं होता। "अति सर्व वर्जयेत्" अति का लाड़ प्यार भी बालक के लिए हानिकारक होता है। अतः क्लाइव जब केवल सात ही वर्षका था, तब मिस्टर वेली ने एक पत्र में क्लाइव के पिता को सन् १७३२ ई० के लिखा कि, "क्लाइव इतना लड़ाका हो गया है कि, उसका अब कुछ उपाय नहीं"। अर्थात् सात वर्ष की अवस्था में ही उस अमित लाड़-प्यार ने क्लाइव के स्वभाव को बिगाड़ कर उसको अच्छे मनुष्यों के सहनशीलता, विनम्रता, परोपकारता आदि सद्गुणों से वञ्चित कर दिया।

अतएव हम बालक क्लाइव का यह दुर्भाग्य ही समझते हैं कि वह बाल्यावस्था में अपने माता पिता के निरीक्षण में न रह सका और न उस पर उस कोमल अवस्था में उसकी माता के सद्गुणों का प्रभाव ही पड़ पाया। क्योंकि यह प्रायः देखा जाता है कि जो बालक स्वभाव से ही बड़ा ढीठ और नटखट होता है और किसी के कहने में नहीं रहता वह अपने पिता माता की शिक्षा और शासन से अवश्य दब जाता है। माता पिता की

शिक्षा और शासन से क्लाइव का बड़ा ही उपकार होता। क्योंकि वह स्वयं शासित हो कर बाल्यावस्था में ही यदि शासन से परिचित हो जाता, तो पीछे से उसके चालचलन पर जो बड़ा भारी कलङ्क लगाया गया, वह कलङ्क कदाचित् कभी न लगता।

इतना होने पर भी क्लाइव के शिक्षागुरुओं और पोषकों की राय क्लाइव के विषय में बुरी नहीं थी। उसके आरम्भिक शिक्षक डाक्टर ईटन ने क्लाइव के सम्बन्ध में यह भविष्यद्वाणी कही थी कि, यदि क्लाइव मनुष्य की अवस्था तक पहुँच सका, और उसको स्वतन्त्रतापूर्वक अपनी बुद्धि के अनुसार काम करने का अवसर मिला, तो वह बड़ा प्रतापी होगा और उसके समान बहुत कम लोग गणनीय होंगे।

वास्तव में कालान्तर में हुआ भी ऐसा ही। यद्यपि दोष-शून्य नहीं तथापि ऐसे लोगों की संख्या भारतवर्ष के प्रचलित अंगरेज़ी इतिहासों में बहुत कम है, जो क्लाइव से बढ़ कर प्रतापी हुए हों। अर्थात पिता का दुतकारा, निरावलम्ब, निराश्रय, निस्सहाय एक सामान्य बालक बिना किसी की सहायता के अपने ही उद्योग और अपनी ही चतुराई से मिस्टर क्लाइव से लार्ड क्लाइव हुआ हो। डाक्टर ईटन से अनुभवी शिक्षक के पास भी क्लाइव यदि बराबर शिक्षा पाता तो भी सम्भव था कि, कदाचित उसके स्वभाव में परिवर्त्तन होता, पर ऐसा भी न हुआ। ग्यारह वर्ष की उमर में क्लाइव मारकेट ड्रेटन के एक स्कूल में विद्याभ्यास के लिए भेजा गया और सन् १७३७ ई० में वह मर्चेन्ट टेलर स्कूल में पढ़ने लगा। थोड़े ही दिनों बाद

इस स्कूल से भी नाम कटवा कर वह तीसरे स्कूल में जो हैमिल हैम्पस्टेड में था पढ़ने लगा। इस स्कूल में उसने सन् १७४३ ई० तक विद्याध्ययन किया।

जिस समय क्लाइव मारकेट ड्रेटन के स्कूल में था उस समय की उसके विषय में एक विचित्र जनश्रुति विलायत में प्रचलित है। कहते हैं क्लाइव ने इस छोटे से स्थान के कतिपय विद्याभ्यास से विरत एवं अकर्मण्य बालकों को एक जमात स्थापित की थी, जो डाँके डाला करती थी। उस जमात के भय से वहाँ के बाज़ार के प्रत्येक दूकानदार को, अपनी दूकानों की खिड़कियों के काँचों की रक्षा के निमित्त, उस जमात को नियमित रूप से दो पैसे और कुछ सेव देने पड़ते थे।

बात जो कुछ रही हो और विलायतवासियों का इस दन्त-कथा पर भले ही विश्वास हो, पर हम ऐसी बातों पर कम विश्वास करते हैं। द्वितीय जार्ज के शासन काल में एक छोटे से छोटे बाज़ार के दूकानदारों में भयभीत हो, इस भाँति घूस देने की प्रथा प्रचलित थी-इसमें हमको पूर्ण सन्देह है। हाँ, जिस प्रकार लड़कों के साथ लोग अब भी कभी कभी आमोद प्रमोद के लिये हँसी किया करते हैं; वैसे ही यदि ड्रेटन के दूकानदार भी इन लोगों के साथ हँसी करते रहे हों, तो कदाचित् यह दन्त-कथा भी किसी अंश में सत्य हो सक्ती है।

इतना हम अवश्य कहेंगे कि, बात चाहें जो कुछ रही हो पर इस जनश्रुति में क्लाइव के चरित्र का एक प्रकार से चित्र ठीक ठीक खींचा गया है। क्योंकि क्लाइव निस्सन्देह पीछे से

दुःखदायी किन्तु प्रतिभावान् और नेता (Leader) होने की योग्यता से सम्पन्न मनुष्य निकला। क्लाइव निर्भीक और उद्दण्ड तो था ही, इसीसे उसका मन पढ़ने-लिखने में बहुत कम लगता था।

ऐसा निर्भय और लापरवाह बालक आगे क्या करेगा क्लाइव के बाप को इसकी चिन्ता सताने लगी। पिता ने इस बात का प्रयत्न किया कि, राबर्ट वकील हो, पर जो बालक आरम्भ से स्वतन्त्रता भोग रहा है, वह भला कब पिता की आज्ञा के वशवर्ती हो काम करने लगा! अन्त में क्लाइव के पिता ने उसको वकील बनाने का विचार छोड़ दिया। राबर्ट को वकील बनाने का विचार तो छोड़ दिया, पर उससे काम क्या लिया जाय? इस बात की चिन्ता क्लाइव के पिता को सदैव बनी रहती। अन्त में क्लाइव के पिता ने उसको "ईस्ट इण्डिया कंपनी" में क्लर्क के काम पर नियुक्त करवा, भारतवर्ष भेजना निश्चित किया। उस समय क्लाइव की अवस्था केवल अठारह वर्ष की थी।

जब क्लाइव को कंपनी में चालीस रुपये मासिक की नौकरी मिली, तब उसके कुटुम्बियों को वैसी ही प्रसन्नता हुई, जैसी प्रसन्नता इन दिनों हम लोगों को अपने किसी आत्मीय के निकृष्ट सेवावृत्ति पाने पर होती है। पर क्लाइव के कुटुम्बियों को उसके नौकर हो जाने ही की केवल प्रसन्नता नहीं थी, किन्तु उन लोगों की प्रसन्नता का एक कारण यह भी था कि, उनके कुटुम्ब के तेरह लड़के लड़कियों में सब से बड़े और उत्पाती बालक को थी नौकरी मिल गई और उन लोगों को अब आशा होने लगी

कि, उनसे अलग रह कर और परतन्त्रता की रज्जु में जकड़ा जाकर, क्लाइव का कुछ न कुछ कल्याण अवश्य होगा।

इसमें सन्देह नहीं कि क्लाइव अपने माता-पिता का एक बड़ा भारी सङ्कट काट कर उनसे कुछ दिनों के लिए पृथक् हो गया, परन्तु उसके पिता को यह विश्वास कदापि नहीं था कि, क्लाइव का भविष्य क्लर्कशिप में चमकेगा। रावर्ट के पिता का अनुमान था कि, क्लाइव का भाग्योदय सामरिक विभाग में ही होगा। अन्त में क्लाइव के पिता का उक्त अनुमान सत्य भी निकला। क्योंकि क्लाइव के भाग्योदय का प्रधान और मुख्य कारण उसका वीरोचित साहस ही था। यद्यपि क्लाइव स्वभाव ही से सामरिक कार्यों में अनुरक्त सा रहता था; तथापि उसके विषय में केवल यह कह देना अनुचित जान पड़ता है कि, वह केवल समर-कुशल ही था।

क्लाइव, अति दुलारा क्लाइव, पिता माता का अवज्ञाकारी क्लाइव और साहसी क्लाइव, अपने पिता माता को छोड़, बाल्यावस्था के साथियों का मोह तोड़ और स्वदेश को छोड़, सन् १७४२ ई० की ग्रीष्म ऋतु में इङ्गलेंड से मदरास के लिए जहाज़ पर सवार हो, रवाना हुआ।



द्वितीय अध्याय

प्रकृतिः खलु सा महीयसः सहते नान्य समुन्नतिं यया।

(क्लाइव को समुद्रयात्रा-ब्रेजिल में नौ मास रह कर पुर्त्तगाली भाषा सीखना-मदरास में क्लाइव-निरावलम्ब क्लाइव-नौकरी पर क्लाइव-सेक्रेटरी से विवाद-क्लाइव का स्वदेशप्रेम-इंगलेंड और फ्रांस में झगड़ा-मदरास पर फ़रासीसियों का आक्रमण-डूप्ले की आज्ञा से मदरास का पतन-अगरेज़ों का मदरास छोड़ कर भागना-भारत की शोचनीय दशा-कंपनी के सर्जन द्वारा बादशाह की लड़की का आरोग्य होना—कम्पनी को कोठी बनाने की आज्ञा मिलना-क्लाइव का आत्मरक्षा के लिए युद्ध करना।)

क्लाइव स्वदेश छोड़कर प्रथम बार ही विदेश को चला था। यह उसकी विदेशयात्रा बड़ी लंबी और कष्टप्रद थी। जिस जहाज़ में क्लाइव सवार हुआ था, वह जहाज़ असल में इतनी लंबी यात्रा के योग्य भी नहीं था। अतएव वह जहाज ब्रेजिल पहुँचते पहुँचते मरम्मत करने योग्य हो गया। कदाचित् हमारे पाठक यह सुनकर हैरान हुए होंगे कि, मदरास के लिए प्रस्थानित जहाज़ ब्रेजिल क्या करने गया था? पर ऐसी शङ्का उठाने वालों को जानना चाहिए कि जिस समय की बात हम लिख रहे हैं, उस समय इङ्गलैंड को जैसी आर्थिक दशा आज है, वैसी उन दिनों नहीं थी। उन दिनों भारतवर्ष का सरल मार्ग बनाने को इङ्गलेंड असमर्थ था। साथ ही विचारशील पाठक उस समय के जहाज़ों की दशा पर भी विचार करें। उन दिनों इङ्गलेंडवालों को पृथिवी के भिन्न भिन्न प्रान्तों में आवागमन के लिए बड़ा चक्कर

काटना पड़ता था। हमारे पाठक यह जानकर और भी आश्चर्यान्वित होंगे, जिस जहाज़ पर क्लाइव सवार था, वह जहाज़ ब्रेजिल पहुँचते पहुँचते मरम्मत के योग्य हो गया और उसकी मरम्मत करते करते ब्रेजिल में नौ मास व्यतीत हो गये। उन नौ मासों के भीतर क्लाइव ने अपने पास का सब धन जो वह घर से लाया था, खर्च कर डाला। किन्तु वहाँ नौ मास रह कर, उसने पुर्त्तगाली भाषा में कुछ अभ्यास कर लिया जिससे उसको पीछे बड़ी सहातता मिली।

किसी तरह जहाज़ ब्रेजिल से आगे बढ़ा, पर 'केप' आते आते उस जहाज़ को मरम्मत के लिए पुनः रुक जाना पड़ा। इसी तरह कई बार कई स्थानों पर ठहरते और नाना प्रकार की आपत्तियों को झेलते क्लाइव ने जहाज़ में बैठे बैठे दूसरे वर्ष की वसन्त ऋतु में मद्रास के दर्शन किये। अर्थात जिस मार्ग को लोग प्रायः तीन सप्ताह में समाप्त करते हैं, उसको क्लाइव ने अठारह मास में पूरा कर पाया। जब क्लाइव ने मद्रास के बंदर में पदार्पण किया, तब न तो उस भावी भारत के जेता के लिए फोर्ट सेंट जार्ज से तोपों को सलामी दागी गयी, न "वैलकम" की ध्वजा पताकाओं से मद्रास की गलियों की शोभा बढ़ाई गई, न मद्रास म्यूनिसीपैलिटी ने अभिनन्दनपत्र अर्पण कर, भावी जेता की अभ्यर्थना करते हुए चापलूसी की बातें कहीं और न मद्रास निवासियों ने आकर क्लाइव को फ़र्शी सलामें कीं। यह उस समय किसीको ज्ञात न था कि, वह कथड़ी में छिपा हुआ लाल एक

दिन इस देश का जेता और इङ्गलेंड का गौरव समझा जायगा।

मदरास में पहुँच कर क्लाइव ने देखा कि, उस समय कंपनी के कर्मचारियों और एजेंटों की सुवृहत, उच्च, स्वच्छ अट्टालिकाओं से, जो समुद्रतट पर सघन बगीचों के बीचोंबीच खड़ी थीं, नगर की अनुपम शोभा हो रही है। महीनों लों बराबर समुद्र में रहकर, जब क्लाइव ने मदरास के मनोहारी दृश्य को, वहाँ के गेहुँआ रङ्ग के निवासियों को और समुद्रतट की नैसर्गिक शोभा को देखा, तब उसको साश्चर्य आनन्द हुआ।

क्लाइव ने जहाज़ छोड़ जब पृथिवी पर पैर रखा तब उसके पास एक फूटी कौड़ी भी नहीं थी। पाठकों को स्मरण होगा कि, क्लाइव ने अपने पास का सब धन तो ब्रैजिल में नौ मास रहकर ही व्यय कर डाला था। मार्ग में द्रव्य की आवश्यकता होने पर उसने जहाज़ के कप्तान से ऋण स्वरूप कुछ धन लिया था और मासिक वेतन में से थोड़ा थोड़ा करके चुका देने का कप्तान को वचन दिया था।

उन्नीस वर्ष की अवस्था में इस साहसी एवं चपल नवयुवक को वह काम करना पड़ा, जिसको वह हृदय से नापसंद करता था। गवर्नर के सेक्रेटरी की आज्ञा के अधीन होकर, सुबह से शाम तक नित्य कलम घिस कर, इकतीसवें दिन चालीस रुपये पाना—भला क्लाइव से साहसी एवं मनचले नवयुवक को कब पसंद आने लगा! उसको इस शोचनीय दशा में, असहायों की एकमात्र सहायक, असन्तोषियों को एकमात्र सन्तोषप्रदायिनी, निर्धनियों का धन और निरावलम्बियों को एकमात्र अवलम्ब-स्वरूप

आशा ही—क्लाइव की शुष्क हृदय-मरुस्थली में वारि सिञ्चन करती थी। वह आशा यही थी की, एक न एक दिन, कंपनी के अन्य कर्मचारियों की भाँति, वह भी अपने निज का कोई व्यवसाय करके, अपनी आशा को पूर्ण करने में सफलमनोरथ हो सकेगा।

मिस्टर होम्स क्लाइव की इस कष्टावस्था के सम्बन्ध में लिखते हैं:—

"Such a position to a youth of his nature, must have been galling indeed; and in estimating his character and his life, this peculiarly painful condition, so different from that of scores of young Indian Civil Servants to-day; and so calculated to embitter and depress him, must be rememb-ered."

Four Heroes of India.

क्लाइव की गाँठ में न तो धन था और न विपत्ति में सहायता देने वाला उसका कोई परिचित मित्र ही मदरास में था। घर से चलते समय पिता ने परिचय के अर्थ, मदरासस्थित अपने एक मित्र के नाम क्लाइव को एक पत्र दिया था—किन्तु, जब मनुष्य को क़ष्ट मिलनेवाला होता है, तब प्रतिकूल घटनायें हुआ करती हैं। सो क्लाइव के मदरास पहुँचने के पूर्व ही क्लाइव के पिता के वह मित्र मदरास से इङ्गलेंड के लिए रवाना हो चुके थे और क्लाइव की लज्जावनत तथा अभिमानयुक्त प्रकृति मित्र बनाने और परिचितों की संख्या बढ़ाने में बाधक थी। यहाँ तक कि कई मास लों, मदरास में क्लाइव का कोई मित्र ही नहीं था।

इसमें सन्देह नहीं कि, ऐसी उग्र और असहिष्णु प्रकृति के

वशीभूत होना, क्लाइव के चरित्र में लाञ्छन है। यद्यपि बाल्यावस्था से पड़े हुए इन दुस्स्वभावों के लिए किसी अंश में क्लाइव मार्जनीय है; तथापि इसके लिए वह अवश्य दोषी है कि, ज्ञानवृद्धि के साथ ही साथ, जान कर भी वह अपनी आपत्तिजनक प्रकृति को न सुधार सका। कहते हैं कि, एक अवसर पर क्लाइव ने गवर्नर के सेक्रेटरी को कुछ कटुवाक्य कह डाले, जिसके लिए गवर्नर के निर्देशानुसार उसको सेक्रेटरी से क्षमा माँगनी पड़ी। वैसे चाहे क्लाइव गवर्नर की आज्ञा को न भी मानता, पर जब गवर्नर के उसको नौकरी से छुड़ा देने की धमकी दी, तब निरुपाय हो, उसको क्षमा माँगनी ही पड़ी। इस घटना के कुछ ही समय पश्चात् जब उस साधुस्वभाव सेक्रेटरी ने क्लाइव से अपने साथ भोजन करने के लिए कहा तब उसने बड़ी अकड़ और रुखाई के साथ उत्तर दिया "महाशय! नहीं, मुझको आपके साथ खाने को आज्ञा नहीं हुई"

"No, Sir I have not been told to dine with you."

उस समय चाहे जो कुछ रहा हो—पर ऐसी घटनाओं का क्लाइव के मन और प्रकृति पर प्रभाव अवश्य पड़ा। फल यह हुआ कि, उसने मर्मस्पर्शी शब्दों में अपने घर को एक पत्र लिखा जिसमें उसने इङ्गलेंड लौट जाने की उत्कट उत्कण्ठा प्रकट की और साथ ही अपने कुटुम्बियों और सम्बन्धियों के प्रति कुछ मोह ममता का भी परिचय दिया। उसने अपने पत्र में लिखा, "जब से मैं अपने देश से बिदा होकर चला हूँ, तब से आज लों मेरा एक दिन भी प्रसन्नतापूर्वक व्यतीत नहीं हुआ। ठहर ठहर

कर जब मुझे अपने प्यारे देश इङ्गलेंड का स्मरण आता है, तब मेरे मन की एक विलक्षण दशा हो जाती है"। क्लाइव ने अपने पत्र में मैनचेष्टर को अपनी कामनाओं का केन्द्रस्थल बतलाते हुए लिखा था कि, यदि उसको कहीं एक बार भी स्वदेश को विशेष कर मैनचेष्टर को देखने का सौभाग्य प्राप्त हो, तो वह अपनी सर्वोच्च अभिलाषाओं को पूर्ण हुई समझेगा। धन्य है यह स्वदेशानुराग ! धन्य है यह स्वदेश प्रेम !! धन्य है यह सर्वोच्च अभिलाषा !!! हे स्वदेशप्रेम ! जब तुमने क्लाइव से उद्दण्डप्रकृति नवयुवक के भी हृदय में जाकर अपना प्रभुत्व स्थापित किया, तब तुम सहृदय धर्मभीरु भारतवासियों के हृदय मानसरोवर में एक बार स्थान कर अपने आत्मा का प्रायश्चित्त क्यों नहीं करते ? वास्तव में जिस जाति को स्वदेश, स्वजाति और स्वधर्म में अनुराग है वह जाति मृत्युलोक में रहकर भी स्वर्गसुख का अनुभव कर रही है ! अंगरेज जाति का यह स्वदेश स्वजाति और स्वधर्मानुराग ही है जो उनको दिन दूनी, रात चौगुनी उन्नति करके उनको सभ्यता के उच्च शिखर पर अवस्थित कर रहा है। जिस मनुष्य में स्वदेशानुराग है; स्वजाति से प्रेम है और स्वधर्म में निष्ठा है, वह मनुष्य-मनुष्य नहीं है, वह पूजनीय भूदेवता है। पाठको ! इसी स्वदेश और स्वजाति के अनुराग में अनुरक्त और व्रती हो, रावर्ट क्लाइव लार्ड क्लाइव होगा।

रावर्ट क्लाइव पर इन घटनाओं का तो प्रभाव पड़ता ही गया, परन्तु उसके प्रकृतिपरिवर्तन का एक और भी कारण बतलाया जाता है। कहते हैं मदरास के गवर्नर ने क्लाइव को अपने

पुस्तकालय में आने जाने का अधिकार दे दिया था और क्लाइव ने इस अधिकार को प्राप्त कर, यथेष्ट लाभ भी उठाया था।

क्लाइव को जब कलम रगड़ते रगड़ते दो वर्ष बीत गये, तब एक ऐसी घटना हुई जिससे उसके जीवन का वह दृश्य सहसा पलट गया। अचानक फ़रासीसियों ने मदरास को घेर लिया और नगर तथा फोर्ट जार्ज की रक्षा के लिए लिखा पढ़ी होने लगी। क्लाइव के उद्योगपर्व के प्रथम अध्याय का श्रीगणेश यहीं से समझना चाहिए। इस घटना का मूल और आदि कारण उस समय आष्ट्रिया के उत्तराधिकार का झगड़ा था। उन दिनों इङ्गलेंड और फ्राँस में विद्वेषाग्नि भड़क रही थी। जिस समय का यह वृत्तान्त है, उस समय इङ्गलेंड के सिंहासन पर द्वितीय जार्ज आसीन थे और वह मेरिया थैरेसा Maria Theresa के मित्र थे। फ्राँस के सम्राट् उस समय उनके विपक्षी हुए। उस युद्ध का आरम्भ तो यूरोप में हुआ, पर धीरे धीरे वह युद्ध जहाँ जहाँ इन दोनों के अधिकार थे, प्रायः उन सभी जगहों में फैल गया। लेबोरडाने Labourdonnaye ने जो उस समय मारीशस का गवनर था—मदरास पर सेना लेकर चढ़ाई की और उसको घेर लिया। किन्तु उसने यह प्रतिज्ञा कर ली थी कि, मदरास तभी तक फ्राँस के घिराव में रहेगा, जब तक उसको हर्जाना न मिल जायगा और हर्जाना भी नाम मात्र का ही था।

जब इसकी खबर पाँडिचेरी-स्थित फ्रेंच गवर्नर को लगी, तब उससे लेबोरडाने का यह विजय न सहा गया, क्योंकि, डूपले लेबोरडाने से ईर्ष्या रखता था। प्रसङ्ग आ पड़ने पर कहना पड़ता

है कि, उन दिनों कार्यकर्त्ताओं की परस्पर की ईर्ष्या और द्वेष के कारण ही फ्राँस का अधिपत्य इस देश पर न जम पाया; नहीं तो जिस समय का हाल हम लिख रहे हैं, उस समय फ्राँस का दबदबा इस देश में बहुत अधिक चढ़ गया था। एक तो डूपले, लेबोरडाने का उत्कर्ष नहीं सह सका और दूसरे उसको यह भी अभीष्ट नहीं था कि, अंगरेज़ों की मदरास में जड़ जमे। अतः उसने यह प्रकट किया कि इस देश में वह फ्राँस की ओर से गवर्नर है और वहाँ से इस देश पर उसे पूर्ण अधिकार प्राप्त है। अतएव उसके आज्ञानुसार मदरास का पतन हुआ और डूपले ने स्वयं फ्राँस की विजयपताका उड़ाते हुए नगर के प्रतिष्ठित लोगों और वहाँ के गवर्नर के साथ बड़ी धूमधाम से नगर की गलियों में भ्रमण किया। बाद को अपनी ओर से वहाँ एक फ्रेंच गवर्नर भी नियुक्त किया।

इन भयानक घटनाओं से अंगरेज़ों को अपनी इच्छा के विरुद्ध मदरास परित्याग करना पड़ा। जो सामर्थ्यवान् थे, वे प्रकट अथवा भेष बदल, नगर छोड़ कर भागने लगे। इन भागने वालों में एक क्लाइव भी था। वह मुसलमान के भेष में अपने एक मित्र मास्कलीन के साथ भाग निकला। इस बीच में उसने मदरास में अपने मित्र भी बना लिये थे। परन्तु यह मास्कलीन पीछे से उसका साला हुआ था।

मदरास के समीप अङ्गरेजों के अधिकार में एक दूसरा क़िला कड्डलोर में था, जिसका नाम सेंट डेविड था। उनदोनों ने

इसी फोर्ट का मार्ग पकड़ा और वहाँ पहुँच कर कुछ समय लों वहाँ वास किया।

हमारे पाठक अब ज़रा भारतवर्ष की उस समय की परिस्थिति का स्मरण करें और घटनासूत्रों के सहारे अपने देश के भिन्न भिन्न प्रान्तों में मानसिक विचरण करें। जो मुग़ल साम्राज्य (The Great Mogul Empire) भारतवर्षीय राजाओं की सम्पत्ति पर पानी फेर कर स्थापित किया गया था और जिसकी राजधानी उस समय दिल्ली में थी, वही मुग़ल साम्राज्य, अधःपात के पूर्व लक्षणों से युक्त हो चला था। डच, पुर्त्तगाल, फरांसीसी और अंग्रेज़ आदि विदेशी जातियों के लोग, व्यापार द्वारा इस देश के रहनेवालों से हेलमेल बढ़ा कर, अपना मतलब गाँठने की धुन में लगे हुए थे।

इन विदेशी व्यापारियों में अंगरेज़ यहाँ सब के पीछे आये थे। जिस समय का यह हाल है, उस समय इङ्गलैंड में काली मिर्च तथा अन्य हिन्दुस्तानी मसाले अधिक मूल्यवान् पदार्थ समझे जाते थे। अंगरेज़ व्यापारी इन वस्तुओं को यहाँ ख़रीदते थे और विलायती चटकीली भड़कीली चीज़ों को यहाँ बेचते थे। इतिहास पढ़नेवाले जानते हैं कि, सन् १६१२ ई० में अंगरेज व्यापारियों को सब से प्रथम दक्षिण के सूरत नगर में व्यवसाय करने के अर्थ कोठी बनाने की आज्ञा, उस समय के मुग़ल बादशाह जहाँगीर से मिली थी। किन्तु नहीं मालूम मिस्टर होम्स ने इस आज्ञा को क्यों अंगरेज़ों के लिए अपमानकारक बतलाया है। (the almost contemptuous permission)

सूरत में अंगरेज व्यापारियों की कोठी बनने के अट्ठाईस वर्षों बाद एक अंगरेज जर्राह ने, जिसका नाम निश्चित करने में विलायती लेखकों में अब तक मतभेद है; मुग़लसम्राट् से अंगरेज़ व्यापारियों के लिए हुगली नगर में; जो अब कलकत्ते के नाम से प्रसिद्ध है, ठहरने की परवानगी हासिल की।

कहते हैं कि, अङ्गरेज़ जर्राह मि० वोडन ने, मुग़ल वादशाह की असाध्य रोग से पीड़िता एक लड़की की चिकित्सा कर उसे आरोग्य किया। इस पर वादशाह सलामत जर्राह पर अत्यन्त प्रसन्न हुए और उससे पुरस्कार माँगने को कहा। यह स्वदेश भक्त सर्जन यदि चाहता, तो अपने लिए इस संसार में अतुलनीय भोग करने की उत्तम से उत्तम सामग्री वादशाह से पुरस्कार में माँग सक्ता था। क्योंकि उस समय के वादशाह जिस पर प्रसन्न होते थे, उसको मान-प्रतिष्ठा अथवा पुरस्कार देते समय इस वात का भी पूर्ण विचार कर लेते थे कि उनकी दी हुई प्रतिष्ठा पानेवाले को पीढ़ी दर पीढ़ी तक वनी रहे। उस समय केवल नाममात्र की रायवहादुरी अथवा खानवहादुरी पाकर प्रतिष्ठा पानेवाले को इस कोरी प्रतिष्ठा की प्रतिष्ठा वनाये रखने की स्वयं चिन्ता नहीं करनी पड़ती थी। परन्तु, उस विशाल कीर्तिशाली स्वदेशभक्त तथा स्वजातिप्रेमी सर्जन ने स्वार्थ को अति हीन और तुच्छ समझ, पुरस्कार स्वरूप, अपनी जाति के व्यापारियों की व्यवसायवृद्धि के अर्थ, उनके हुगली में वसने की केवल आज्ञा ही प्राप्त की।

इतिहास पढ़ने वालों को मालूम होगा कि सन् १६०० ई०

में इङ्गलेंड-निवासियों ने भारतवर्ष में व्यापार करने के लिए "ब्रिटिश ईस्ट इंडिया" नाम की एक व्यापार-समिति [कंपनी] स्थापित की थी। हमारे देशवासियों में केवल बाप-बेटा, अथवा भाई-भाई ही मिलकर व्यापार करना जानते हैं। शिवचरणलाल रामचरणलाल, गोविन्दप्रसाद गयाप्रसाद, मूलचन्द रामप्रसाद आदि केवल युग्म नाम की कोठियाँ अथवा दुकानें तो इस देश में एक दो नहीं, असंख्य मिलेंगी, पर वास्तव में अभी भारतवर्ष में "ज्वाइंट स्टाक व्यापार" समितियों का एक प्रकार से पूर्ण अभाव है। इतने बड़े देश में यदि बीस-पचीस ऐसी बड़ी कंपनियाँ हुई भी, तो न होने ही के बराबर हैं। इसका कारण या तो यही है कि, भारतवासी अभी ज्वाइंट स्टाक कपनियों के स्थापित करने के लाभ को भलीभाँति नहीं समझ पाये हैं अथवा एक दो ऐसी कंपनियों में प्रबन्ध की शिथिलता से और क्षुद्र प्रकृति स्वार्थलोलुप कर्मचारियों के कुकृत्यों से लाभ के बदले बराबर हानि उठाकर, यहाँ वालों ने कंपनियों को ढकोसला समझ रखा है। परन्तु, वास्तव में बात यह है कि, बहुत से थोड़ी-थोड़ी पूँजीवाले, यदि कोई बड़ा व्यापार किया चाहें, तो ज्वाइंट स्टाक कंपनी से बढ़कर, ऐसे लोगों के लिए आशातीत लाभ उठाने का अन्य कोई उपाय नहीं है, अस्तु।

असल में इङ्गलेंड और भारतवर्ष के बीच व्यापार सन् १५९१ ई० में आरम्भ हो गया था। सबसे प्रथम लैंकेस्टर नाम का एक अंगरेज़ व्यापारी सन् १५९१ ई० में तीन जहाज़ लेकर भारतवर्ष के लिए रवाना हुआ था। किन्तु इन तीन जहाज़ों में

से यहाँ तक केवल एक ही जहाज़ पहुँच पाया। यहाँ पहुँच कर बचे हुए उस एक जहाज़ के मल्लाहों के बीच परस्पर झगड़ा होते होते बलवा हो गया और बेचारे कप्तान लैंकेष्टर को एक विदेशी जहाज़ में बैठकर घर लौट जाना पड़ा। जब कप्तान लैंकेष्टर इङ्गलेंड पहुँचा और वहाँ वालों को यहाँ का सब वृत्तान्त सुनाया, तब वहाँ वालों ने यहाँ भेजने के लिए व्यापारी जहाजों का एक बेड़ा तैयार किया और भारतवर्ष के साथ व्यवसाय करने के लिए एक कंपनी स्थापित की। इस कम्पनी का नाम "ब्रिटिश ईस्ट इंडियन कंपनी" रखा गया। क्वीन ऐलिज़बेथ के राज्यकाल में, सबसे प्रथम सन् १६०० ई० में इस कंपनी को व्यापार करने के लिए अधिकारपत्र (चार्टर) प्राप्त हुआ। पीछे से कई बार वह दुहराया भी गया।

जिस समय वह कंपनी स्थापित हुई थी, उस समय इस कंपनी का मूलधन पौन लाख पौंड से भी कम, अर्थात् केवल बहत्तर हज़ार पौंड था। इस कंपनी ने प्रथम चार जहाज़ों में विलायती माल भर कर भारतवर्ष को भेजा। इस प्रथम बार के उद्योग में ही कंपनी को बहुत लाभ हुआ और उसकी सम्पत्ति बढ़ी। कहते हैं सन् १६८३ ई० में उस कंपनी ने सौ पौंड के माल को पाँच सौ पौंड में बेचा—अर्थात् जिस वस्तु को कंपनी ने इङ्गलेंड में एक पौंड को खरीदा था, उसी वस्तु को इस देश में उसने असली मूल्य से चार गुना अधिक मूल्य लेकर बेचा। इस कंपनी की श्रीवृद्धि देखकर, इङ्गलेंड के अन्य व्यवसाइयों का उत्साह बढ़ा और सन् १६९८ ई० में एक दूसरी व्यापार-

समिति स्थापित हुई। परन्तु जब इन दोनों कम्पनियों के अध्यक्षों ने देखा कि, समान उद्देश्य रख कर, एक ही देश में दो कंपनी होने से एक प्रबल शक्ति का ह्रास होता है, तब सन् १७०२ ई० में, तृतीय विलियम के राज्यकाल में, वे दोनों कंपनियाँ मिल कर एक हो गयीं। उस संयुक्त कंपनी का नये सिरे से एक नया अधिकारपत्र (Charter) लिखा गया। इस नवीन अधिकार-पत्र के नियमों के अनुसार कंपनी को इस देश में शस्त्रधारी रक्षकों को नियुक्त करने और आत्मरक्षा तथा शान्ति-स्थापित रखने के लिए विग्रह करने का भी अधिकार प्राप्त हुआ। इस चार्टर के प्राप्त होने के पूर्व ही, अंगरेज़ व्यापारी मदरास में अपनी स्थिति दृढ़ कर चुके थे और द्वितीय चार्ल्स को पुर्त्तगाल देश की कैथराइन आफ ब्रेगेन्ज़ा (Chatherine of Braganza) के साथ विवाह करने से, बम्बई नगर अंगरेज़ों के अधिकृत हो चुका था।

जिस समय फ्रेंच गवर्नर डूप्ले ने मदरास को अंगरेज़ों से छीना, उस समय अंगरेज़ों के अधिकार में यहाँ के नगरों में से कडुलोर, जो कारोमण्डल समुद्र तट में अवस्थित है, तथा बङ्गाल और कर्नाटक के बीच का विज़गापट्टम—ये—दो ही नगर थे। मदरास का सेंट जार्ज क़िला, कडुलोर का सेंट डेविड दुर्ग और कलकत्ते के फोर्ट विलियम नामक तीन क़िलों पर अंगरेज़ों का पूर्ण अधिकार था।

अभी तक अंगरेज़ों का विचार भारतवर्ष में केवल शान्तिपूर्वक व्यवसाय ही करने का था। ये लोग लड़ाई लड़ कर इस देश को अपने अधिकार में कर लेने के प्रयासी नहीं थे। यद्यपि

इन लोगों के पास लड़ाके सिपाही थे; तथापि कम्पनी के कर्मचारी अभी तक अपने को एक व्यापारी संघ के केवल कारिन्दे ही समझते थे। अतएव यह आश्चर्य की बात नहीं समझनी चाहिये कि, ब्रिटिश जाति सी पराक्रमी प्रतापशालिनी जाति को, मारीशस द्वीप के फरासीसी गवर्नर लेवोरडाने ने, बड़ी सुगमता से जीतकर, मद्रास को अपने आधीन कर लिया। किन्तु पाठक आगे देखेंगे कि डूपले की आत्मोन्नति की तृष्णा ने घटना के प्रवाह को एकदम फेर दिया। डूपले मद्रास का पतन करके ही सन्तुष्ट नहीं हुआ, उसने एक सेना तैयार कर सेंट डेविड दुर्ग को, जहाँ मद्रास से भागकर अंगरेज़ों ने शरण ली थी—जा घेरा। अब दुर्ग में अविरुद्ध अंगरेज़ों को आत्मरक्षा के लिये विवश होना पड़ा। आत्मरक्षा के उपायों को सोचने विचारने में नवयुवक उत्साही क्लाइव का सर्द माथा गर्म हो गया। उस होनहार पराक्रमी नवयुवक ने, क्लर्क होने पर भी, लेखनी छोड़ शस्त्र पकड़ना सहर्ष स्वीकार किया और विषम युद्ध होने पर आत्मरक्षा के लिए, क्लाइव की तीक्ष्ण बुद्धि दुर्धर्ष पराक्रम के साथ शत्रु की सेना का संहार करने लगी।



तृतीय अध्याय

प्रौढ़ं विक्रान्तमासीद्वनइवभवताशूरशून्येरणेऽस्मिन्

(फरासीसियों का पराजय—क्लाइव का जुआ खेलना—द्वन्द्व युद्ध—अंगरेज़ों और फ़रासीसियों में सन्धि—मदरास पर अंगरेज़ों का दूसरी बार अधिकार—क्लाइव पुनः क्लार्कशिप पर—भारतवर्ष में मुसलमानी राज्य की दुर्दशा—निज़ामत के लिए झगड़ा—मिर्ज़ाशाह और चन्दा साहब का झगड़ा—डूपले की कुटिल नीति—करनाटक की नवाबी—आरकट युद्ध की तैयारी और उस पर अंगरेज़ों का अधिकार।)

फ़रासीसियों की पल्टन ने यद्यपि सेंट डेविड दुर्ग को घेर लिया तथापि जिस दुर्ग की रक्षा के लिए स्वजाति का गौरव बढ़ाने वाला और स्वदेशानुरागी क्लाइव कटिबद्ध था; उस दुर्ग पर अधिकार कर लेना सहज बात नहीं थी। जब तक अंगरेज़ी एडमिरल ग्रिफिन समुद्रतट पर न पहुँचे, तब तक दुर्ग के भीतर से अंगरेज़ों ने दुर्ग लेने की फरासीसियों की सब चेष्टाओं को निष्फल किया। ज्योंहीं डूपले ने एडमिरल ग्रिफिन के आने के समाचार सुने, त्योंही उसने उस स्थान से खसकना आरम्भ किया। सेंट डेविड दुर्ग की रक्षा-करने-वालों में क्लाइव ने सब से अधिक ख्याति पाई और साथ ही अप्रतिम वीरता दिखलाने के पुरस्कार में क्लाइव को कंपनी की ओर से प्रतिष्ठासूचक एक पद मिला। किन्तु वास्तव में क्लाइव की वीरता की क़दर करने वाले पुरुषों का इस समय अभाव था, और यही कारण था कि, उसका अब भी उस क्लार्कशिप से पीछा

न छूटा । काम पड़ने पर क्लाइव लड़ाई लड़ता और शान्ति के समय कंपनी की कोठी में क्लार्क का काम भी करता।

यह सब होने पर भी क्लाइव के भाग्योदय के दिवस समीप आ रहे थे। एक ओर तो उसके वीरोचित साहस और कष्ट सहिष्णुता की चर्चा हो रही थी, और दूसरी ओर वह एक बड़े भारी दुर्व्यसन में पड़ गया था। यह दुर्व्यसन ऐसा वैसा नहीं था। इस दुर्व्यसन में लिप्त होने से जो भीषण परिणाम होता है उसको समझाने के लिये हिन्दू इतिहास पुराणों में भी शिक्षाप्रद उदाहरण दिये गये हैं। किन्हीं कारणों से क्यों न हो—जिस महागर्ह्य दुर्व्यसन में पड़ कर महाराज युधिष्ठिर जैसे राजराजेश्वर अपनी पत्नी द्रौपदी तक को गँवा बैठे, जिस दुर्व्यसन के वशीभूत हो राजा नल सर्वस्व को हार, अपनी प्रियतमा दमयन्ती के साथ, असह्य दारुण कष्टों को सहते हुए, महान कष्टप्रद अरण्यों में विचरण कर—अन्त में दासत्व वृत्ति स्वीकार करने के लिए विवश हुए—उसी महागर्ह्य दुर्व्यसन द्यूत के वशीभूत हो, क्लाइव ने अपने पास का बहुत सा धन निकाल दिया। हमारे विचारशील इतिहासवेत्ता पाठक जानते होंगे कि कलि के आरम्भ में इस सभ्यशिरोमणि भारत के उत्कर्ष को मिट्टी में मिलाये जाने का मूलकारण द्यूत ही है। तब ही क्यों—अब भी तो भारतवर्ष में प्रत्येक वर्ष एक दिवस ऐसा आता है, जिस दिन सैकड़ों नहीं हज़ारों अविवेकी गृहस्थ बिना परिश्रम धन पाने की बलवती आशा के वशीभूत हो, अपनी श्रीमती के आभूषणों तक को द्यूत में अर्पण कर, अन्त में अपनी मान-मर्य्यादा को

एकदम मिट्टी में मिला देते हैं। सहस्रों घरों में हाहाकार मच जाता है; तिसपर भी कुछ हमारे भाई धर्म की दुहाई देते हुए—देशनाशकारी कई एक प्रधान प्रथाओं में से, दिवाली पर द्यूत खेलने की नाशकारी प्रथा को भी सनातनधर्म बतलाते हैं। हम नहीं समझ सकते कि द्यूत खेलना किस प्रकार धर्म हो सकता है? क्यों के धर्माचरण से सदसद्विवेक नष्ट होता हुआ आज तक हमने नहीं सुना, और द्यूत खेलते ही धर्म्माधर्म का विचार एकदम नष्ट हो जाता है। इसका उदाहरण खोजने को दूर जाना नहीं होगा। इसका प्रत्यक्ष प्रमाण इस पुस्तक का चरित्रनायक क्लाइव ही है। क्लाइव को जुवा खेलते खेलते एक दिन मालूम हो गया कि खेल में उसके साथ बेईमानी हुई है। यह बात मालूम होते ही—जो ऋण उस पर जुए में हार जाने से हुआ था, उसको चुकाने से उसने एकदम इन्कार किया। इसका अन्तिम फल वही हुआ, जो कौरव-पाण्डवों के द्यूत का हुआ था। क्लाइव का उसके ज्वारी साथी के साथ भयानक झगड़ा हो गया। क्लाइव को, जो अभी इक्कीस वर्ष का भी नहीं था—उसके प्रतिद्वन्द्वी ने द्वन्द्वयुद्ध [Duel] के लिये ललकारा।

हमारे देश वाले, पुरुष की उम्र की प्रथम पच्चीस वर्षों को गधापचीसी बतलाया करते हैं। क्लाइव भी अभी गदहपचीसी ही में था। उसको अभी आगे पीछे का कम ज्ञान था। इसीसे उग्र प्रकृति क्लाइव युद्ध की ललकार सुनते ही आगा पीछा विचारे विना ही, द्वन्द्वयुद्ध करने को सन्नद्ध हो गया। बस, फिर क्या था—भरी हुई एक पिस्तौल क्लाइव के हाथ में थी और दूसरी

वैसी ही एक पिस्तौल उसके प्रतिपक्षी के हाथ में। प्रथम क्लाइव ने अपनी पिस्तौल का घोड़ा दबाया, पर उसका निशाना खाली गया। अब उसके विपक्षी के वार करने की बारी आयी। उसने क्लाइव के सिर का निशाना लगा, उससे कहा कि या तो तू मुझ से अपने प्राणों की भिक्षा माँग, नहीं तो थोड़ी ही देर में तेरा निर्जीव शरीर मेरे चरणों पर लोटता हुआ दिखलाई पड़ेगा। इन शब्दो का क्लाइव के मन पर ऐसा प्रभाव पड़ा कि कि उसने अपने विपक्षी से प्राणों की भिक्षा माँगी और इस प्रकार यह प्राणसांघातिक लीला समाप्त हुई।

इस घटना को पढ़, लोग क्लाइव के विषय में जो चाहें सो कहें, परन्तु दुर्ग के उच्चकर्मचारी जो सैंटडेविड दुर्ग की रक्षा के समय क्लाइव के अतुल वीरोचित साहस का भलीभाँति परिचय पा चुके थे, इस घटना को तुच्छ बतलाकर, बरका गये। वास्तव में बात यह है कि, जब किसी की किसी पर किसी कारणवश श्रद्धा उत्पन्न हो जाती है, तब स्वभावतः उसके दोष छोटे और गुण बड़े दिखलाई देने लगते हैं।

इसी बीच में डूपले और अंगरेज गवर्नर के बीच में सन्धि हुई और इस सन्धि के एक ठहराव के अनुसार मदरास पूर्ववत् अंगरेज़ों के अधिकार में आया। साथ ही क्लाइव को अपनी पुरानी क्लार्कशिप पर लौटना पड़ा। अंगरेज़ और फरासीसियों में सन्धि तो हो गई; किन्तु साथ ही उनकी दशा में परिवर्तन भी हो गया, जो आगे पढ़ने पर अवगत होगा। जिस समय का वृत्तान्त यहाँ लिखा जा रहा है; उस समय भारतवर्ष के शासन की बागडोर

जिन लोगों के हाथ में थी, वे परस्पर ईर्ष्यानल में धधक रहे थे। इसीसे उस समय के विचारशील दूरदर्शियों को भासने लगा था कि, शीघ्र ही अधिकार और देश प्राप्ति के लोभ में फँसी हुई, ये दोनों जातियाँ पुनः रणक्षेत्र में अवतीर्ण होंगी।

जिस समय इस देश के शासकों में एक दूसरे के नाश करने के लिये कुचक्र रचे जा रहे थे; जिस समय इस देश के शासक परस्पर की फूट के अन्तिम परिणाम को न विचार कर, शत्रु-मित्र की यथार्थ पहिचान से वञ्चित हो गये थे; जिस समय इस देश में स्वार्थ, अधर्म्म और अन्याय सीमा को लाँघे जा रहे थे, उस समय क्लाइव कम्पनी को राईटर्स बिलडिङ्ग में क्लार्क का काम करता था। बीच बीच में जब कभी आवश्यकता पड़ती, तब अंगरेज़ों की ओर से मेजर लारेंस युद्ध करने जाते थे और मेजर लारेंस की सहायता के लिए क्लाइव को क्लार्कशिप छोड़ कर उनके साथ जाना पड़ता था।

क्लाइव जब कंपनी की कोठी में काम करता था, तब उसको कोठी का जमा खर्च रखने के अतिरिक्त, गोदाम में रखे हुए माल की झड़ती लेनी पड़ती और माल का निरीक्षण भी करना पड़ता था। गर्मी अधिक पड़ने से कोठियों में कंपनी के कर्मचारी अपना अपना काम दुपहर के पूर्व ही निपटा देते थे और मध्याह्नकाल को आनन्दपूर्वक बाग बगीचों में काट, सायङ्काल होने पर समुद्रतट के स्वास्थ्यकर पवन का सेवन किया करते थे; परन्तु क्लाइव को इस देश की गर्मी असह्य थी। बंगाल की उष्णप्रधान ऋतु का उसके स्वास्थ्य पर बुरा प्रभाव पड़ता था। उस समय गर्मी

शमन करने के कृत्रिम उपायों का आविष्कार नहीं हुआ था। ख़स की टट्टियों में होकर 'थरमेंटिडोट' की मन्द मन्द शीतल बयार कंपनी के कर्मचारियों के उत्तप्त मस्तकों को ठंडा नहीं करती थी। इसका कारण चाहें तो यही हो कि, उन दिनों लोगों को ये उपाय मालूम नहीं थे अथवा उस समय इस देश के रहने वालों में आत्म गौरव और देशाभिमान की ठसक बनी हुई थी, जिसके कारण उन लोगों ने विदेशियों की पंखाकुलीगीरी करने में अपने देश की और अपनी अप्रतिष्ठा समझी, अस्तु।

जब एक ओर स्वार्थलोलुप फ्रेंच गवर्नर डूपले अपनी धुन में लगा हुआ, मुगल साम्राज्य के अधःपात की प्रतीक्षा कर रहा था और साथ ही भारतवर्ष में फ्रेंच गवर्नमेंट स्थापित करने को राह जोह रहा था; तब दूसरी ओर तिमूरलंग के जाँनशीन हाथ पर हाथ रखे—सलतनत के कारोबार को एक तरह का बोझ समझ, चापलूस दर्बारियों के हाथ की कठपुतली बने हुए थे। जो विशाल मुगल साम्राज्य किसी समय इस सारे देश में व्याप्त था, वही अब निज़ामत और सूबों में पूर्ण रीति से बँट चुका था। निज़ामत और नवाबियों के निज़ाम और नवाब जाहिरा तो सालाना ख़िराज भेज कर देहली के तख्त के मातहत बने हुए थे, किन्तु असल में वे लोग अपने अपने हल्कों में हर तरह से खुदमुख़तार थे। एक तो उस समय के बादशाह सलामत रात दिन ऐशोइशरत में डूब कर, सलतनत के मामलों को देखना भालना अपनी शान के ख़िलाफ़ समझते थे और दूसरे बादशाही निज़ामतों और नवाबियों में लोग स्थायीरूप से (Permanently) मुकर्रर कर

दिये गये थे। वर्त्तमान वृटिश गवर्नमेंट की प्रचलित प्रथा के अनुसार उस समय के मुग़ल गवर्नरों के शासन की अवधि पाँच अथवा छः वर्ष नहीं थी।

इतिहासवेत्ताओं का मत है कि, तिमूरलंग के ख़ानदान में अन्तिम बादशाह औरंजेब था, जिसने बड़े रोबदाब से इस देश पर हुकूमत की। यह बादशाह, क्लाइव के यहाँ आने से चालीस साल पहिले सन १७०७ ई० में, दफ़नाया जा चुका था। इसीसे अब फ्राँस और इङ्गलैंड के विदेशी व्यापारियों के ऊपर इस सुविशाल मुग़ल साम्राज्य की केवल छाया मात्र रह गई थी किन्तु वास्तव में इन लोगों को छोटे छोटे राजाओं, सूबेदारों और नवाबों ही से काम पड़ता था और ये लोग निरङ्कुश होने के कारण, परस्पर की ईर्ष्याग्नि में स्वयं ही जल रहे थे।

लिखते खेद होता है कि, यह देश उस समय ज़रज़मीन के लिये अशान्ति, विग्रह, फूट और कलह का निवासस्थान हो रहा था। ईरानी, अफ़गान और मरहठों ने लूट खसोट और मार काट मचा कर, इस देश को स्मशानतुल्य बना दिया था। भारत का इतिहास जिन्होंने पढ़ा है, वे जानते ही होंगे कि, असंख्य धनराशि तो देहली के ख़जाने से नादिरशाह और उसके साथी ही ले जा चुके थे। बची बचायी देश की सम्पत्ति को नष्ट करने के लिए उस समय के शासक काफ़ी थे। देहली के बादशाह को राजपूतों ने जब कर्त्तव्य-विमुख देखा, तब वे भी अपने को स्वतन्त्र समझने लगे और देश भर में लुटेरों के छोटे छोटे दल खड़े हो गये।

सन् १७४८ ई० में, जिस समय दक्षिण के निज़ाम मरे,

उस समय देश की बड़ी बुरी दशा थी। निज़ाम की सेना के अन्तर्गत ही नहीं, किन्तु निज़ाम के मातहत करनाटक राज्य के लोग निज़ाम की सम्पत्ति के उत्तराधिकारी बनने का दुस्साहस कर बैठे। उस समय दक्षिणी भारत कई एक छोटे छोटे भागों में विभक्त था, जो कई एक राजाओं और नवाबों से शासित होते थे। वे छोटे छोटे राज्य निज़ाम के उसी प्रकार मातहत थे जिस प्रकार निज़ाम स्वयं देहली के नाममात्र के मुगल सम्राट् के मातहत थे। दोनों प्रतिद्वन्द्वियों ने विदेशियों की सहायता माँगी। ये प्रतिद्वन्द्वी मिरजा पाहजङ्ग और चन्दा साहब थे। इन दोनों का समान उद्देश्य करनाटक की नवाबी हथिया लेने का था और इन दोनों ने डूपले से मदद माँगी।

अपने उद्देश्य की पूर्ति का जो उपाय इन दोनों ने विचारा था, वह इन लोगों के उद्देश्य के विपरीत फल देने वाला था। क्योंकि समुद्रतट के नगरों में विदेशियों के पैर जम चुके थे। अर्थी दोष को नहीं देखता; अतः इन लोगों ने विष को अमृत समझा। डूपले ने जलती हुई दोनों मसालों में तेल डाला। उसने कुछ फरासीसी और कुछ यूरोपीय शिक्षा-प्राप्त देशी सैनिक इन दोनों की सहायता के लिए भेजे। फल यह हुआ कि, मिर्जा साहब तो दक्षिण के निज़ाम बन बैठे और चन्दा साहब ने करनाटक का राज्य अपने हस्तगत कर लिया। डूपले की भेजी हुई सेना ने विजय प्राप्त कर, दोनों व्यक्तियों को उनकी इच्छानुसार सफलता प्रदान की। इससे डूपले को बड़ा लाभ हुआ। सहायता देने के पलटे में, मिर्जा साहब ने डूपले पर धन और अधिकारों की

वर्षा की। डूपले का तो भला अब कहना ही क्या था ! उसके दोनों हाथों में लड्डू थे। उसको स्वदेश फ्राँस के बराबर एक देश का शासन मिला। डूपले ने कुटिलनीति का अवलम्बन कर निज़ाम पर अपना इतना प्रभाव डाला कि, निज़ाम साहब को यदि कोई व्यक्ति किसी बात के लिए अर्ज़ी देता, तो जब तक डूपले साहब की उस पर सही सिफारिश न होती, तब तक अर्ज़ी की कुछ सुनवाई न होती। मिर्ज़ा साहब डूपले के हाथ की कठ-पुतली बन गये थे। डूपले जिधर और जिस तरह उनको घुमाते थे वह उधर ही और उसी तरह घूम जाते थे।

वास्तव में हमारे देश के लोगों पर यूरोपवालों के प्रभाव पड़ने का यही श्रीगणेश समझना चाहिये। मिस्टर होम्स का मत है कि, पीछे से अंगरेज़ों ने भी डूपले की इसी नीति का अवलम्बन किया और देशी शासकों द्वारा अपना शासन स्थापित कर, पीछे से देशी शासकों को अपने हाथ की कठपुतली बना, स्वयं उस देश के हर्ताकर्त्ता-विधाता बन गये*। हमारी समझ में इस नीति को उपयोग में लाने के लिए उस समय के अर्थलोलुप वणिक् अंगरेज़ दोषी नहीं कहे जा सकते। क्योंकि एक यह भी नीति है कि "जैसी बहे बयारि पीठ तब तैसी दीजे"। नीति कुशल वे ही हैं जो देश काल पात्र का विचार रख काम किया करते हैं।

---

*Here we see the beginning of a policy which was afterwards used with such immense effect by the English themselves, viz. the policy of ruling through the native dignitaries who soon became puppets in the hands of their virtual masters.

जिस समय इस देश में चारों तरफ लूटखसोट, मारकाट मची हुई थी, उस समय वे अंगरेज़ वणिक् इस नीति से काम न लेते तो करते क्या? विशेष कर ऐसी दशा में जब उनको यह मालूम हो गया था कि यदि वे इस नीति के अनुसार कार्य्य न करेंगे, तो भारतवर्ष से उन लोगों का कुछ भी सम्बन्ध शेष नहीं रह जायगा। साथ ही पकी पकाई महूक को, थोड़ी सी मधु-मक्खियों के भय से, जो थोड़ी देर के लिए सिर पर कम्बल ओढ़-कर धुआँ देने से भगाई जा सक्ती थीं, छोड़ देना' उनकी आन्त-रिक इच्छा के सर्वथा प्रतिकूल भी था।

दक्षिण में डूपले की शक्ति दिनोंदिन बड़ी तेज़ी के साथ बढ़ रही थी, जिससे अंगरेज़ जाति यहाँ वालों की दृष्टि में कम-ज़ोर जाति जँचने लगी थी। प्राणी मात्र का स्वभाव निर्बल को तुच्छ समझना है। सो जब यहाँ वालों ने देखा कि फरासीसियों ने मदरास को अंगरेज़ों से छीन लिया, और फरासीसियों ही की सहायता से निज़ाम दक्षिण प्रान्त का शासक बन गया, तब उन-लोगों का, अंगरेज़ जाति को निर्बल समझना, स्वभाविक ही था।

निज़ाम मिर्ज़ा की मृत्यु हुई और डूपले ने मिर्ज़ा के खान्दान ही के एक पुरुष को निज़ाम बनाया, जिससे उसके अधिकार में कोई भी त्रुटि न पड़ने पावे। उस समय दक्षिण में डूपले की तूती बोलती थी। यहाँ तक कि डूपले की यादगार में एक स्तूप खड़ा किया गया, पदक बांटे गये और डूपले की विजय-कीर्ति को चिरस्थायिनी करने के अर्थ City of Dupleix' Victory नाम का, एक नगर भी बसाया गया।

एक ओर तो डूपले की दुन्दुभी बज रही थी और दूसरी ओर एक नये दृश्य का उपक्रम छिड़ रहा था। अंगरेज़ों ने फरासीसियों के बनाये हुए करनाटक के नवाब चन्दा साहब को वहाँ का नवाब ही न माना। अंगरेज़ों ने करनाटक के भूतपूर्व मृत नवाब के लड़के मोहम्मदअली को करनाटक की गद्दी का उत्तराधिकारी माना। यदि देखा जाय, तो वास्तव में करनाटक की गद्दी पाने का क़ानूनन अधिकारी मोहम्मदअली ही था। परन्तु मोहम्मदअली के अधिकार में त्रिचनापली नगर को छोड़ अन्य कोई नगर न था। चन्दा साहब ने जब सुना कि अंगरेज़ मोहम्मदअली के पक्षपाती हैं, तब उसने अपने मित्र फरासीसियों की सहायता लेकर त्रिचनापली जा घेरा। अपने मित्र मोहम्मद अली के घिर जाने के समाचार जब अंगरेज़ों ने सुने तब उनको बड़ी चिन्ता हुई। वे सोचने लगे कि उपस्थित स्थित्ति में उनको किस नीति का अवलम्बन करना चाहिए। क्या वे मौनव्रत धारण कर अपने मित्र मोहम्मद अली की दुर्दशा होने दें और मित्रोचित कर्त्तव्य से मुख मोड़ें? ऐसा करने से तो उनके प्रतिद्वन्द्वी फरासीसियों को भारतवर्ष के एक प्रान्त का पूर्ण अधिकार प्राप्त हो जायगा और आवश्यकता पड़ने पर वे अपने मित्र के साथ मित्रोचित व्यवहार भी न कर पावेंगे।

अंगरेज़ इस जटिल समस्या पर पूर्ण रीति से विचार कर किसी निश्चित परिणाम पर पहुँचने भी न पाये थे, तब तक ऐश्वर्य से मत्त डूपले ने सेंट डेविड दुर्ग और मदरास नगर के समीप, फरासीसी सीमा स्थापित करने को अपने झंडे झंडियाँ गाड़ दीं,

जिससे यह प्रकट होने लगा कि झंडे झंडियों के भीतर अंगरेज़ों का कब्ज़ा ही नहीं है। डूपले की इस चाल से अंगरेज़ व्यापारियों ने अपना घोर अपमान समझा और अपनी प्रतिष्ठा बनाये रखने के लिए, वे अस्त्र उठाने को विवश हुए। झंडे झंडियाँ गाड़ कर भी डूपले को सन्तोष न हुआ। उसने यह गप्प भी उड़वा दी कि झंडों के उस ओर की भूमि भी बहुत शीघ्र फ़रासीसियों की सीमा में आने वाली है।

अंगरेज़ व्यापारियों को एक तो अपने मित्र मोहम्मद अली को सहायता पहुँचाने की चिन्ता थी ही, दूसरे इस अपमान से उनके हृदय पर बड़ी चोट लगी। किन्तु उस समय मदरास में उनका कोई समर-प्रसिद्ध अफ़सर न था। मेजर लारेंस जिसने अपने युद्धकौशल को दिखला, उस समय अंगरेज़ों में सुकीर्ति पायी थी, इङ्गलेंड में था। मेजर लारेंस ने ही क्लाइव को "प्रकृत-सिद्ध योद्धा" (Born Soldier) बतलाया था।

यह ईश्वरीय नियम है कि, जो वस्तु एक को विष होती है, वही वस्तु किसी व्यक्ति विशेष के लिए अमृत हो जाती है। कविवर कालिदासजी ने कहा भी है:—

"विशमप्यमृतं क्वचिद् भवेत्। अमृतं वा विषमीश्वरेच्छया"

सो अंगरेज़ व्यपारियों के लिए तो यह कुसमय था और क्लाइव को यही सुसमय। यह घटना क्लाइव की उन्नति के ठीक अनुकूल थी।

क्लाइव जैसा साहसी और प्रखर बुद्धि सम्पन्न था, इस कठिन समय में उसने अपनी प्रकृति का तदनुसार ही परिचय भी दिया। कंपनी के गुमाश्तों को उसने सम्मति दी कि, इस समय

विपक्षियों के आक्रमण की प्रतीक्षा न कर, हम लोगों को शत्रु की सीमा में घुस कर युद्ध आरम्भ कर देना चाहिए। एक साधारण क्लार्क के मुख से यह साहस भरी बात सुन, उसके उच्च और सहृदय कर्मचारियों को उसके वीरोचित साहस और उसकी दूरदर्शिता पर कितना साश्चर्य आनन्द हुआ होगा इसका अनुमान हमारे पाठक स्वयं कर लें।

प्रथम तो अंगरेज व्यापारियों ने केपटिन जिंजर (Captain Ginger) की अध्यक्षता में कुछ सेना भेज कर त्रिचनापली में अविरुद्ध मोहम्मदअली की सहायता करनी चाही, पर जब इस उद्योग में कुछ सफलता न हुई, तब दूसरी बार अन्य प्रतिकार न देख, मदरास के अंगरेज़ गवर्नर, मिस्टर साण्डर्स (Mr. Saunders) को क्लाइव की इच्छानुसार शत्रुसीमा में घुस— अपने मित्र मोहम्मदअली के विपक्षी के आरकट दुर्ग पर आक्रमण करने की आज्ञा देनी पड़ी। अंगरेज़ों को उस समय यह बात जान पड़ने लगी कि, अब आत्मरक्षा का समय आ गया है और उनको अपनी अरक्षित स्थिति की बड़ी चिन्ता होने लगी। मदरास के अंगरेज़ गवर्नर ने क्लाइव के साथ दो सौ ब्रिटिश जाति के वीर योद्धा, तीन सौ अंगरेज़ी ढंग से शिक्षित एवं प्रभुभक्त वीर हिन्दुस्तानी सिपाही कर दिये। इन पाँच सौ योद्धाओं के कमांडर, क्लाइव के प्राईवेट ष्टाफ में आठ और भी अफसर थे जिनमें चार तो क्लाइव के सहयोगी, कम्पनी के क्लार्क थे। इस घटना चक्र को देख यह कहना ही पड़ेगा कि भारतवर्ष में अंगरेज़ों के राज्य की नींव जमानेवाले अल्प-वेतन-भोगी बेचारे क्लार्क ही हैं।

पाँच सौ योद्धाओं की छोटी सेना का अधिपति बनकर वीर क्लाइव ने आरकट दुर्ग पर आक्रमण करने के लिए बड़े उत्साह और सावधानी से पयान किया। जिस समय क्लाइव विजय यात्रा के लिए मदरास से रवाना हुआ, उस समय आकाश में अवस्थित सूर्य्य ने भारत की भावी दुर्गति को विचार और काल के अनिवार्य प्रभाव पर दृष्टिपात कर मेघों से अपने मुख को छिपा लिया। जिनके वंशधर रघुकुल भूषण क्षत्रिय चूड़ामणि श्रीराघवेन्द्र ने इस देश से, देशान्तर विजय करने के अर्थ यात्रा की थी, आज उन्हीं सूर्यवंशियों के पितृदेश भारत-वर्ष को, हस्तगत करने का श्रीगणेश करने के अर्थ, विदेशीय वणिक समाज का एक वीर युवक जाता है। जिस समय सूर्य भगवान् की यह दशा थी, उस समय इन्द्र महाराज के आनन्द के नगाड़े बज रहे थे। कलि के आदि में जिस देश के अन्तर्गत व्रजमण्डल में इनको अपमानित हो, अविचारयुक्त किए हुए कर्म के अर्थ क्षमा माँगनी पड़ी थी, उसी देश की भावी दशा को विचार और अपने अपमान का बदला पूरा होने की आशा से महाराज इन्द्र अत्यन्त प्रसन्न थे। क्लाइव की विजय-यात्रा के दिन आकाश में मेघों की अवली को देखने और परस्पर की टक्करों से उत्पन्न हुई, गड़गड़ाहट और बिजली की तड़कन को सुनने से यही जान पड़ता था कि, उस दिन इन्द्र महाराज के नन्दनकानन में मानों कोई बड़ा उत्सव मनाया जा रहा था। बीच बीच में मेघों से छोटी छोटी जल की बूंदों के गिरने से ऐसा जान पड़ता था कि, मानों इन्द्र महाराज अपने अपमान का बदला

लेने वाले की वीरगति और साहस पर मुग्ध हो, आनन्दाश्रु टपका रहे थे। यदि कोई मनुष्य इस ईर्ष्या-सम्पन्न संसार में कुछ करने की इच्छा रख कर, कुछ करना चाहता हो, तो उसको अपनी स्तुति निन्दा सुन कर, कुछ भी ध्यान न देना चाहिये! क्लाइव भी ऋतु की प्रतिकूलता रूपी निन्दा की कुछ भी परवाह न कर, वीरगति से अपनी छोटीसी वाहिनी को परिचालित करता हुआ आगे बढ़ता ही चला गया। क्लाइव के इस साहस का परिणाम यह हुआ कि, क्लाइव के आरकट नगर में अचानक पहुँचने से दुर्ग रक्षक किंकर्त्तव्यविमूढ़ हो, स्तम्भित हो गये और क्लाइव ने युद्ध किये विना ही, आरकट दुर्ग पर अंगरेज़ी झंडा गाड़ दिया। दुर्गरक्षक भयभीत हो, दुर्ग छोड़, इधर उधर भागने लगे। क्यों न हो "उद्योगिनं पुरुष सिंहमुपैतिलक्ष्मीः", नीतिप्राज्ञों की बात भला कब टल सकती है। पश्चिमी विद्वानों का मत है कि, जो स्वयं कुछ करते हैं, उनकी सहायता ईश्वर स्वयं करता है। "God helps those who help themselves." निरी बातों की बकबक करके आकाश-पाताल के कुलाबे मिलाने वाली बातों ही से जो अपना प्रभुत्व और महत्व जमाने का प्रयासी है, वह अन्त में केवल हास्य का पात्र होता है। जो बहुत सी बकवक न कर, कुछ करता भी है, क्लाइव की तरह उसके द्वार पर विजय-लक्ष्मी सदैव नृत्य किया करती है।

क्लाइव ने अपने प्रथम उद्योग ही में सफलता प्राप्त की। पर हमको आगे चलकर अभी यह देखना है कि जिस स्थान पर उसने अभी अपना अधिकार जमा लिया है उस स्थान को वह अपने अधिकार में आगे रख भी सका कि नहीं।

चतुर्थ अध्याय।

सहते विपत्सहस्रं मानीनैवापमानं लेशमपि ।

(आरकट युद्ध—युद्ध में देशी वीरों की सहनशीलता और सहृदयता—क्लाइव को घूस का लोभ-क्लाइव का घूस अस्वीकार करते हुए उचित उत्तर—चन्दा साहब के पुत्र राजा साहब का रणक्षेत्र छोड़कर भागना—क्लाइव की सामयिक प्रतिभा—क्लाइव की विजय—'सिटी आफ डुप्ले विक्टरी' का सर्वनाश—चन्दा साहब की मृत्यु—आरकट युद्ध से भारतवर्ष में ब्रिटिश राज्य की नींव)

आरकट दुर्ग के भयभीत रक्षक जो अभी तक बिलकुल डरे हुए थे, अब कुछ कुछ चैतन्य होने लगे और क़िले के समीप जमा हुए। परन्तु, ये लोग क्लाइव की वीरता, साहस एवं दृढ़ता से नितान्त अपरिचित थे। क्लाइव इन लोगों को घेरकर इन पर आक्रमण करने की फिकिर में था और रात्रि होते ही उसने अन्धकार में अपने विपक्षियों पर आक्रमण करने की आज्ञा अपनी सेना को देदी। युद्ध का नियम है कि जो सेना आक्रमण करती है, उसका बल उस सेना से जिस पर आक्रमण किया जाय—अधिक होना चाहिये, परन्तु यहाँ इसके बिलकुल विपरीत बात थी। अर्थात् क्लाइव की आक्रमणकारी सेना की अपेक्षा उसके प्रतिद्वन्द्वी की सेना छः गुनी अधिक थी। अधिक होने पर भी क्लाइव ने कौशलपूर्वक शत्रु सेना को रात्रि के अन्धकार में मार भगाया। साथ ही क्लाइव की सेना का एक भी सिपाही हताहत नहीं हुआ।

डूपले ने जब यह समाचार सुना—तब उसको बड़ा विस्मय हुआ। जो पलटनें त्रिचनापली में मोहम्मदअली को घेरे पड़ी थीं, उनमें से चन्दा साहब ने चार हज़ार सेना देकर अपने पुत्र राजा साहब को आरकट उद्धार के लिए रवाना किया। उधर डूपले ने पाण्डीचेरी से १५० फरासीसी और वेलूर (Vellore) से तीन सौ हिन्दुस्तानी सिपाही, राजा साहब की सहायता करने को पीछे से और भी भेजे। क्लाइव ने जिन तीन हज़ार दुर्गरक्षकों को मार भगाया था, उनको भी मिला कर राजा साहब के आधीन अब लगभग साढ़े सात हज़ार सैनिक थे।

पाठक अब ज़रा इन विषम युद्धकारियों की स्थिति पर ध्यान दें और क्लाइव के साहस और उसकी वीरता पर विचार करें। राजा साहब के अधीन जब लगभग साढ़े सात हज़ार योद्धा थे, तब क्लाइव के पास केवल १२० सिपाही और आरकट का दुर्ग था। साथ ही क्लाइव के पास भोजन की सामग्री भी कम हो चली थी। ऐसी अल्पसंख्यक सेना को, शत्रु की साढ़े सात हज़ार सेना से दुर्ग की रक्षा के साथ ही साथ आत्मरक्षा भी करनी थी।

दुर्ग में अवस्थित अंगरेजी सेना के नायक क्लाइव की अवस्था, यद्यपि अभी केवल पच्चीस ही वर्ष की थी और उसकी आयु का अधिक भाग अभी तक कंपनी की मुंशीगीरी में ही व्यतीत हुआ था, तथापि उसमें स्वाभाविक अदम्य उत्साह की मात्रा बहुत अधिक थी। उसने अपनी उस छोटी सी सेना में अपना जैसा उत्साह उत्पन्न करना आरम्भ किया। जो सैनिक

अफ़सर अपनी अधीनस्थ सेना के मन को अपने हस्तगत करना नहीं जानते और केवल रूल्स तथा रेग्यूलेशंस को कठोरता का उपयोग कर के, सिपाहियों के हृदय में केवल भय और संयम ही पैदा करना जानते हैं उन अफ़सरों को अधीनस्थ सेना काम पड़ने पर केवल संयम ही दिखला सकती है; परन्तु क्लाइव प्रकृतिसिद्ध सेनानायक था और उसमें सेनानायक होने की ईश्वरप्रदत्त योग्यता थी, अतः उसने अपनी उस छोटी सी सेना के मन को पूर्णतया अपने हाथ में करके सैनिकों की पूर्ण श्रद्धा अपने ऊपर उत्पन्न कर ली।

युद्ध आरम्भ हुआ और विकट रूप से युद्ध हुआ। पन्द्रह दिवस तक निरन्तर अविश्रान्त युद्ध होता रहा जिसमें रणमत्त वीरों को दम लेने तक का भी अवकाश नहीं मिलता था। आरकट दुर्ग के भीतर से क्लाइव पन्द्रह दिवस तक बराबर आक्रमणकारियों के साथ युद्ध करके उनको पीछे ही हटाता रहा। इन पन्द्रह दिनों के भीतर बड़ी बड़ी घटनायें हुईं, जिनका वर्णन यदि किया जाय तो उस समय के विदेशियों के युद्धकौशल की बाल्यावस्था का पूरा पूरा परिचय पाठकों को मिल सकता है; पर इससे पुस्तक बढ़ जाने का भय है। यहाँ पर यह बता देना भी अनावश्यक न समझा जायगा कि क्लाइव के अधिकार में केवल आरकट का दुर्ग मात्र ही था और आरकट नगर की आबादी राजा साहब के अधिकार में थी।

कहते हैं लड़ते लड़ते क्लाइव की सेना में भोजन की सामग्री कम होने लगी। प्रभुभक्त भारतवासी, क्लाइव के अधी-

नस्थ हिन्दुस्तानी सिपाहियों ने अपने को कुछ न समझ, अपने सहयोगी अंगरेज़ गोरों को रांध रांध कर चावलों का भात खिलाया और स्वयं चावलों के माँड़ को पीकर शत्रु से लड़ते रहे। जो काले सिपाही सदैव से सहनशीलता, सहृदयता और परोपकारिता, प्रभुभक्तिपरायणता आदि वीरोचित गुणों का परिचय देते आये हैं उनके प्रति भेदभाव रखना कितने शोक और लज्जा की बात है।

अन्त में राजा साहब ने व्याकुल होकर १४ नवंबर सन् १७५१ ई० को मुसलमानी रमज़ान के महीने में मोहर्रम के दिन आरकट पर एक साथ आक्रमण करने की आज्ञा देदी। मुसलमानों से आक्रमण के समय यह भी कह दिया था कि, उनको मृत्यु से बिलकुल न डरना चाहिये, क्योंकि मोहर्रम के दिनों में लड़ाई में मरने से मुसलमान बिना किसी रोकटोक के सीधा बहिश्त को जाता है। इससे राजा साहब की सेना में बड़ा जोश पैदा हो गया और उन लोगों ने चार भागों में विभक्त होकर; आरकट दुर्ग पर चार तरफ़ से आक्रमण करना निश्चित किया; किन्तु जब राजा साहब ने सुना कि, मद्रास से केपटिन किलपेट्रिक एक बेटेलियन सेना लेकर और कुछ मरहट्टे, जिनको मोहम्मद अली की सहायता करने के लिये धन दिया गया था, आरकट दुर्ग में अविरुद्ध अंगरेज़ी सेना के उद्धारार्थ आ रहे हैं, तब राजा साहब ने साम, दाम, दण्ड, भेद नीति में से दाम अर्थात् धन का लोभ दिखा कर क्लाइव को अपने हस्तगत करना चाहा।

जो लोग इस संसार में कुछ काम किया चाहते हैं, उनको कई एक अवाञ्छित वासनाओं में से एक धन की वासना भी

परित्याग करनी चाहिए। यद्यपि क्लाइव आदि से अन्त तक धन के लालच में पड़ने से न बच सका; तथापि इस अवसर पर उसने राजा साहब के प्रस्ताव को अस्वीकार करते हुए, दूत द्वारा कहला भेजा कि, "मैं धर्मयुद्ध में प्रवृत्त हूँ और आप जिसकी ओर से लड़ रहे हैं, वह आरकट को नवाबी का मस्नद पाने का हक़दार नहीं है"।

जब दूत ने क्लाइव का सँदेशा राजा साहब को सुनाया तब वह क्रोध से विह्वल हो गये और दुर्ग पर आक्रमण करने का सङ्केत सेना को देने के अर्थ तीन बार अपनी बन्दूक छोड़ो। सङ्केत पाते ही राजा साहब की ओर से दुर्ग पर चारों ओर से एक बार ही आक्रमण करना आरम्भ किया गया। जब क्लाइव ने राजा साहब के अनुरोधपूर्ण किन्तु अनुचित प्रस्ताव को अस्वीकार कर उसका अनादर किया था, तब वह जान गया था कि, आरकट दुर्ग पर आक्रमण अवश्य होगा। अतएव क्लाइव भी इस आक्रमण को रोकने के लिए पहिले ही से तैयारी कर चुका था। उसने दुर्ग की दीवालों में होकर शत्रु सेना पर गोला गोली छोड़ने के लिये छिद्र करवा लिए थे। जब दुर्ग पर चारों ओर से एक साथ आक्रमण हुआ, तब दीवालों के सुराखों में से चारों ओर गोले गोलियों की भीषण अविराम वर्षा होने लगी।

गोले गोलो को इस अविराम वर्षा का फल यह हुआ कि आक्रमणकारी शत्रु दुर्ग के समीप फटकने तक न पाये। अन्त में किले के फाटकों को तुड़वाने के लिए मदमत्त हाथी छोड़े गये परन्तु गोलियों की वर्षा को सहकर फाटक तक पहुँचना सहज

काम न था। गोलियों की वर्षा के सामने हाथियों के भी पैर उखड़ गये और वे आगे न बढ़ सके। लड़ते लड़ते क्लाइव की सेना अब श्रान्त हो चली थी, परन्तु क्लाइव के निरन्तर उत्साह बढ़ाते रहने के कारण, इन लोगों में दूना बल और उत्साह उत्पन्न हो गया था और ये लोग जान पर खेल कर अपने सेना-नायक की आज्ञा का पालन कर रहे थे। क्लाइव स्वयं भी लड़ाई के अन्तिम दिवस तक दुर्ग के भीतर चारों ओर दौड़ दौड़ कर सैनिकों को गोला गोली नियमित रूप से पहुँचाने और समयोचित आज्ञा देने में कोताही नहीं करता था। इस युद्ध में क्लाइव ने ऐसी फुर्ती दिखलाई कि, अपनी सेना को वह सर्वत्र ही मौजूद जान पड़ने लगा।

इन घटनाओं से क्लाइव का पूर्ण विकास हुआ। कथरी में छिपा रत्न अब प्रकट हुआ। क्लाइव को अपने साथियों के साथ काम करने में बड़ा आनन्द प्राप्त होने लगा। उसको अपने साथियों के उत्साह और बल का पूर्ण ज्ञान होने से, उन पर उसे भरोसा हो गया। उसने अपने साथियों के प्रति उचित व्यवहार कर, उनका मन अपने वश में कर लिया।

तीन बार, बराबर हर तरफ से मार खाते खाते, आक्रमण-कारियों ने अपनी दाल गलना कठिन समझ; युद्धक्षेत्र में पीठ दिखलाई। सोलहवें दिन सूर्योदय होते ही प्रभातकाल में दुर्ग के चारों ओर विचित्र दृश्य दिखलाई देता था। जिस स्थान पर गत सायङ्काल में सहस्रों मनुष्यों की भीड़ थी, उस स्थान में अब सिवाय सिपाहियों के मृत शरीरों और बहुत सी युद्धसामग्री के

और कुछ दृष्टिगोचर नहीं होता था। राजा साहब ने जब बराबर बाज़ी हारती हुई देखी और केपटिन केलपेट्रिक तथा मरहट्टों की अवाई सुनी तब घबड़ाकर उसने युद्धक्षेत्र परित्याग करने में ही अपना कल्याण समझा।

इस विकट आरकट युद्ध में क्लाइव की सेना के केवल छः मनुष्य मारे गये। क्लाइव ने आक्रमण के समय क़िले की रक्षा का अत्युत्तम प्रबन्ध किया था। क्लाइव की इस सामरिक प्रतिभा के सम्बन्ध में लिखा है:—

"Although at the time he had neither read books nor conversed with men capable of giving him instructions in the military art, all the resources which he employed in the defence of Arcot, were such as are dictated by the best masters in the science of war"

क्लाइव विजयी होकर भी अपने कर्त्तव्यकर्म को बराबर करता रहा। इस बीच में उसकी सहायता के लिए मदरास से सात सौ सिपाही जिन में दो सौ गोरे भी थे, पहुँच गये। इस नवागत सेना के पहुँचते ही, क्लाइव के उत्साह का अब कहना ही क्या था। उसने भागते हुए राजा साहब और उनकी सेना का पीछा कर उन पर आक्रमण भी किया और वह पूर्णतया इस युद्ध में विजयी हुआ। क्लाइव की इस विजय का राजा साहब की सेना पर ऐसा प्रभाव पड़ा कि, उनकी सेना के छः सौ सिपाही राजा साहब की नौकरी छोड़ कर, क्लाइव की सेना में भर्ती हो गये। जब चन्दा साहब ने अपने पुत्र के पराजय के समाचार सुने तब वह भी त्रिचनापल्लीके घिराव को तोड़ कर

वहाँ से हट गया और आरनी Arnee के गवर्नर ने मोहम्मद अली को करनाटक का नवाब स्वीकृत किया।

क्लाइव को जन्मकुण्डली में कोई ऐसा प्रबल ग्रह अवश्य रहा होगा, जिसका यही प्रभाव था कि, जिस युद्ध में क्लाइव जाता उसमें विजयी ही होता था। जैसे घोर अन्धकारमय रात्रि में निशानाथ के उदय होते ही अन्य छोटे छोटे नक्षत्रों की आभा क्षीण पड़ जाती, वैसे ही क्लाइव के समराङ्गण में पहुँचते ही, अन्य योद्धाओं का पराक्रम क्षीण पड़ जाता था।

जब क्लाइव अन्य युद्धों में फँसा हुआ था; तब समय पाकर डूपले और राजा साहब ने मिलकर सेण्ट जार्ज दुर्ग के आस पास की बस्ती को उजाड़ कर, अंगरेज़ों को अधिक क्षति पहुँचायी, किन्तु क्लाइव ने भी डूपले के विजय स्मारक एक नगर (City of Dupleix's Victory) को उजाड़ कर बदला चुका दिया। इस नगर के ऊजड़ होते ही दक्षिण प्रान्त वासियों को, जो फरासीसियों ही को शक्तिशाली समझ, उनको इस देश का मालिक समझ बैठे थे, मालूम हो गया कि, ब्रिटिश जाति भी शक्तिशालिनी है और अपने आक्रमणकारियों को भली भाँति दमन कर सकती है। इसी बीच में मरहट्टों द्वारा चन्दा साहब के मारे जाने की सूचना प्रकाशित हुई; मोहम्मदअली को अंगरेज़ों द्वारा पूर्ण स्वतन्त्रता प्राप्त हुई और अब वह आरकट की नवाबी निष्कण्टक करने लगा।

विचारशील परिणामदर्शी पाठको! आरकट विजय होते ही अंगरेज़ों का दबदबा बढ़ा और इस देश में ब्रिटिश शक्ति स्था-

पित होने का सूत्रपात हुआ। मरहट्टे समझ गये कि अंगरेज़ लोग निरे व्यवसायी बनिये ही नहीं है। उनमें प्रकृत वीरता भी है, परन्तु डूपले अपना आधिपत्य स्थापित रखने के अर्थ कुचक्र रचता ही रहा—किन्तु शोक है, सफलता उसकी सहवर्तिनी न हुई। डूपले की असफलता के कई कारण हैं। डूपले स्वयं योद्धा नहीं था और न वह योद्धा बन सकता था। उसके असद्व्यवहार और उसकी स्वार्थलिप्सा के कारण उसके अधीनस्थ निम्न श्रेणी के पदाधिकारियों की उस पर अणु मात्र भी श्रद्धा नहीं थी। डूपले जिस यूरोपीय शक्ति को इस देश में प्रतिनिधि था, उस देश के रहने वाले डूपले को स्वार्थलोलुपता को जान गये थे और वे उसको युद्ध में न पड़ने के लिए बराबर निषेध करते थे। यही कारण था कि फ्राँस-देश-वासियों ने आवश्यकता होने पर भी डूपले को समय पर सहायता न दी। धन्य है, डूपले! जो बराबर हर तरफ से निरुत्साहित हो कर भी, अपना आधिपत्य जमाने के अर्थ विग्रह करता ही रहा। किन्तु साथ ही उसको प्रत्येक अवसर पर नीचा ही देखना पड़ा और उधर ब्रिटिश शक्ति का प्रताप उत्तरोत्तर बढ़ने लगा।



पञ्चम अध्याय ।

शूरं कृतज्ञं दृढ़ सौहृदं च लक्ष्मीः स्वयं याति निवास हेतोः

क्लाइव की रंगरूटों को सामरिक-शिक्षा-क्लाइव का प्रणयपरिणय-क्लाइव की स्वदेशयात्रा-स्वदेशियों से सम्मान प्राप्ति-पैतृक भूमि को बंधन से छुड़ाना-सञ्चितद्रव्य का व्यय-पार्लिमेंट की दलादली में फँसना-धन पास न रहने पर द्वितीय वार भारतयात्रा का विचार) ।

क्लाइव में केवल शिक्षित सेना ही को चालन करने की क्षमता नहीं थी किन्तु वह नये लोगों को भी सामरिक शिक्षा देकर योद्धा वना सक्ता था । एक वार कंपनी के डाइरेक्टरों ने लंदन से दो सौ रङ्गरूट भारतीय सेना की सख्या वढ़ाने को भेजे, वे लोग सामरिक विद्या का "क-ख" भी नहीं जानते थे । वास्तव में वे लोग निपट देहाती भुच्च गँवार और निर्वल थे । एक समय उन लोगों में से एक के समीप से अचानक एक गोली निकल गयी । उसको देखते ही मारे डर के वे सव भाग गये । जो वीर, युद्धक्षेत्र में अपने मृत साथियों की छाती पर पैर रखते हुए, आगे वढ़ते हैं; जो वीर समराङ्गण में अपने सम्मुख मृत्यु को ताण्डव नृत्य करते देख, एक पद भी पीछे नहीं हटते और जो वीर एक एक कर अपने साथियों को मृत्यु की गोद में शयन करते देख कर भी निडर हो शत्रुसेना में घुस कर शत्रु का विध्वंस करना ही अपना कर्त्तव्य कर्म समझते हैं ऐसे वीरों को देख यदि कंपनी के भेजे रङ्गरूट भय के मारे, इन दिनों के पढ़े लिखे वाक्‌वीर भारतवासियों की तरह, गोली का दनाका सुनते

ही "ओवावारे" कह कर भाग निकले हों, तो आश्चर्य की क्या बात है ? जो कुछ हो, उन लोगों के लिए यह बड़े सौभाग्य की बात थी कि, उनको सामरिक शिक्षा का भार प्रकृतसिद्ध वीर क्लाइव को सौंपा गया था। फल भी आशातीत ही हुआ। थोड़े ही दिनों में क्लाइव की देख रेख में रह कर, वे लोग वीर योद्धा बन गये। जिस भाँति मञ्चूरिया में अवश्यम्भावी युद्ध का विचार कर और वहाँ की शीतप्रधान प्रकृति का अनुमान कर, दूरदर्शी जापानी रणपण्डितों ने, अपनी सेनाओं को जापान के उत्तर प्रान्त में, जहाँ अत्यन्त शीत पड़ता है, रख कर, सैनिकों को शीतसहिष्णु बना दिया था; उसी प्रकार दूरदर्शी क्लाइव ने उन लोगों को कई बार जोखिम में डाल कर और निरन्तर अपने साथ रख कर, उन क्षीणकाय दुर्बल रङ्गरूटों को विषम घटनाओं में पड़ने पर साहसी बने रहने का आदी बना दिया। यहाँ तक कि, उस समय के सबसे दृढ़ चिङ्गलोपट्टम के दुर्ग को उन्हीं लोगों की सहायता से क्लाइव ने विना लड़ाई लड़े ही अपने हस्तगत कर लिया था।

निरन्तर परिश्रम करने से क्लाइव का शरीर दुर्बल हो गया और उसको अपना स्वास्थ्य ठीक करने के अर्थ कुछ काल तक पूर्ण विश्राम करने की आवश्यकता जान पड़ी। सौभाग्यवश मेजर लारेंस जो क्लाइव की वीरता का परिचय पा चुके थे और उसका वीरोचित समादर भी करते थे, विलायत से लौटे। क्लाइव भी मेजर लारेंस को अपना हितैषी और मित्र समझता था। श्रम दूर करने की आशा से, क्लाइव ने अपना दायित्वभार मेजर लारेंस को सौंप, स्वयं उसके अधीन में रहकर काम करना सहर्ष स्वीकार

किया। हमारे देश में इन दिनों लोग कहते हैं कि विद्या का विकास है और अंगरेजी रहन सहन का अनुकरण करने वालों की संख्या भी अधिक है। किन्तु शोक है कि, अंगरेजों के लाभ-दायक देशोपकारी गुणों का अनुकरण हमारे देशी नहीं करते। यदि कोई देशी आज क्लाइव की स्थिति को प्राप्त हो जाय, तो वह अपने को "एकमेवाद्वितीयं" समझ देश भर का पूज्यतम बनने की चिन्ता ही में मग्न रहेगा। भला वह कब किसी के नीचे काम करने को राजी होने लगा! इस देश के अधःपात के अन्य कारणों में से एक कारण यह भी है कि, लोगों में योग्यता और क्षमता न रहने पर भी लोग अपने से ऊँचे पुरुषों के समकक्ष "To gain equalty" होने की कामना किया करते हैं। जब इस देश के रहने वाले अपने से किसी को उच्च समझते और उच्च पद की मानमर्यादा भी करते थे, तब तक इस देश के रहने वालों के अङ्क में विजयश्री शयन करती थी। पर जब से इस देश में स्वतन्त्रता, स्वतन्त्रता—की कर्णभेदी तथा देश को चौपट करने वाली अनुचित चिल्लाहट मची तभी से यह देश उच्छृङ्खल हो गया है। सभी समानता और स्वतन्त्रता के लिए व्याकुल हैं। ये लोग यह नहीं विचारते कि, जब सभी समान हो जाँयगे तब "परतन्त्र और "असमान" क्या केवल कोषों की ही शोभा बढ़ाने को रहेंगे अथवा ये शब्द ही शिक्षित जातियों की भाषा से निकाल दिये जाँयगे। जिस घर में बाप-बेटा स्त्री-पति माता-दुहिता मालिक नौकर सभी समानता और स्वतन्त्रता प्राप्त करने के प्रयासी हों भला उस घर की क्या दशा होगी?

अस्तु। जिस समय का हाल हम लिख रहे हैं, उस समय वृटिश शक्ति इस देश में स्थापित होने वाली थी उस समय इङ्गलेंड के सौभाग्य से कंपनी के आश्रित जनों में, समानता और स्वतन्त्रता रूपी विष का सञ्चार नहीं हो पाया था, यही कारण है कि, क्लाइव ने सुख्याति और सम्मान पाने पर भी मेजर लारेंस की समानता पाने और स्वतन्त्र होकर रहने की कामना न की और मेजर लारेंस के आधीन रह कर काम करना बुरा न समझा।

क्लाइव के अविश्रान्त निरन्तर परिश्रम करने से अंगरेज़ों के अधीनस्थ भारतीय प्रान्तों में भलीभाँति शान्ति स्थापित हो चुकी थी। ऐसे शान्त समय में क्लाइव के हृदय में पुराने प्रणय परिणय की अग्नि भड़क उठी। आरकट युद्ध में फँसने के पूर्व क्लाइव अपने हृदय मन्दिर में एक युवती की प्रेम की प्रतिमा प्रतिष्ठा कर चुका था। आरकट युद्ध में अविरुद्ध होने पर और युद्ध की चिन्ता में फँसे रहने पर भी कभी कभी उसके हृदय में वही प्रेमाग्नि भड़क उठती थी। वास्तव में प्रेम देव की महिमा विचित्र है! अधिकारी भेद से प्रेमदेव भी फल देते हैं। प्रेमदेव ऊँच नीच भेद से शून्य "सर्वखल्विदंब्रह्म" के अविवेकी अनुयायी नहीं हैं। प्रेमदेव पात्र भेद से अपना नाम भी बदल डालते हैं और नाम बदलते ही उनका गुण कर्म भी बदल जाता है। जब प्रेमदेव किसी प्राणी में प्रवेश कर अपने द्वारा उसकी कन्या अथवा पुत्र में दृढ़ सम्बन्ध स्थापित करते हैं तब उनका नाम स्नेह पड़ जाता है। जब वे ही प्रेमदेव स्त्री अथवा मित्र के साथ सम्बन्ध दृढ़ करते हैं तब उनका नाम प्रेमदेव ही रहता है; जब यह सम्बन्ध

माता पिता गुरु जनों के साथ दृढ़ किया जाता है तब उसका नाम श्रद्धा हो जाता है किन्तु जब प्रेमदेव अन्तरात्मा और परमात्मा रूपी दो पदार्थों के सम्बन्ध को दृढ़तर करते हैं तब उनका नाम भक्ति हो जाता है। प्रेमदेव के राज्य में यावतीय सभी पदार्थ हैं। प्रेमदेव क्लाइव के हृदय में भी अपना राज्य स्थापित कर चुके थे! क्लाइव ने जिस युवती को प्रेमदेव का केन्द्रस्थल समझ अपना सर्वस्व मन समर्पण किया था, वह युवती पुरटन विल्टस (Purton wilts) के रहने वाले मिस्टर ऐडमंड मास्कलीन Edmond Maskeylyne की पुत्री थी। नाम था मिस मारगरेट मास्कलीन। क्लाइव के आरकट युद्ध में जाने के पूर्व इन दोनों के हृदय में एक दूसरे के लिए बहुत कुछ जगह हो गयी थी। आरकट दुर्ग में अवरुद्ध केवल क्लाइव ही अपनी भावी अर्द्धाङ्गिनी के प्रेम-सरों से व्यथित नहीं होता था—प्रत्युत मिस मास्कलीन भी अपने प्रेमी के प्रेम को और उसकी सङ्कटापन्न दशा का स्मरण कर के अहर्निश चिन्तातुर रहती थी। उसकी मानसिक और शारीरिक दशाओं का क्षण क्षण में परिवर्तन हुआ करता था। जिन दिनों आरकट युद्ध छिड़ा हुआ था, यद्यपि उन दिनों मिस मास्कलीन की दशा नितान्त शोचनीय हो गयी थी; तथापि जब वह अपने भावी पति की वीरता के समाचार सुनती; तब उसका शरीर पुलकित हो जाता था और पति की वीरता पर उसको दर्प होता था। जैसा ऊपर निरूपण किया गया है कि, इस दम्पति के सौभाग्य से कुछ दिनों के लिए लड़ाई बंद हो गयी और लड़ाई के गोले गोलियों के भयानक हृदयकम्पकारी शब्द—हर्षप्रद आनन्ददायिनी विवाह

दुन्दुभी की लय में लीन हो गये। क्लाइव की प्रथम भारतयात्रा की इस प्रकार की इति, उसको जन्मभर के लिए स्मारक हुई। रावर्ट क्लाइव और मिस मारगरट मास्कलीन का चिरकाल से अन्तर निहित प्रेम अव सव पर प्रकाशित हुआ। उन दोनों को परस्पर के प्रेम पाश में नियमवद्ध होते देख सव लोगों को अत्यन्त आनन्द हुआ।

भारतवर्ष की पुण्यमयी भूमि में दश वर्ष रह कर क्लाइव की स्थिति और प्रकृति में विलक्षण परिवर्तन हो गया। इस देश में रहने से उसका भाग्योदय हुआ। साथ ही उसने इस देश में रह कर स्वदेश की ऐसी सेवा की कि, इङ्गलैंड-देश निवासियों को जव तक उनका इस देश से सम्वन्ध रहेगा, क्लाइव का नाम विस्मरण नहीं हो सकता। यह रावर्ट क्लाइव के परिश्रम ही का फल है कि, जो जाति इस देश में वाणिज्य करने आई थी, जिस जाति को स्वप्न में भी इस देश पर अपना साम्राज्य स्थापित करने का ख्याल नहीं था, वही जाति धीरे धीरे प्रजा के मन को अपने हाथ में रखकर, इस देश की हर्त्ताकर्त्ता वन गई।

दस वर्ष पूर्व जिस वालक को लोगों ने तुच्छ समझ उसके साथ अनुचित व्यवहार किया था, अव वही तुच्छातितुच्छ वालक अपने परिश्रम, अपने उद्योग और अपनी चतुरता से वृटिश जाति के वीरों में अग्रगण्य हो गया। जो क्लाइव किसी समय नितान्त शुष्क हृदय समझा गया था, उसी क्लाइव ने विलायत लौटने पर विलक्षण सहृदयता का परिचय दिया। क्लाइव के इङ्गलैण्ड में पहुँचने पर कंपनी के डाइरेक्टरों ने वीरोचित कार्य्यों के उपलक्ष

में और कंपनी की श्रीवृद्धि के लिए क्लाइव को धन्यवाद दिया और साथ ही सम्मानपूर्वक रत्नजटित एक उत्तम तलवार भेंट की। डाइरेक्टरों ने भेंट तो की, पर क्लाइव से सहृदय नवयुवक को वह भेंट स्वीकृत नहीं हुई। उसने भेंट को अस्वीकार करते हुए कहा कि, यद्यपि कंपनी ने उसके कार्य्यों के लिए तलवार भेंट कर उसको कृतज्ञ किया है, पर उस भेंट को स्वीकार करने में वह अपने अफ़सर और पुराने मित्र मेजर लारेंस का अपमान समझता है। जब तक कंपनी द्वारा वैसी ही एक तलवार लारेंस को भेंट न की जाय, तब तक वह कंपनी की भेंट को अङ्गीकार नहीं कर सकता। इससे बढ़ कर सहृदयता, अपने उच्चपदाधिकारी के प्रति प्रतिष्ठा एवं अपने मित्र के प्रति प्रेम और क्या हो सकता है ?

क्लाइव जहाँ जाता था वहाँ लोग उसकी बड़ी प्रतिष्ठा करते थे। जिस युवक ने इङ्गलेंड के चिरकाल के प्रतिद्वन्द्वी फ्राँस के अनुष्ठानों को एकदम अस्तव्यस्त कर दिया और कंपनी की श्रीवृद्धि की—अंगरेज़-इतिहास लेखक कहते हैं कि, उस युवक का उसके देशवालों ने बड़े प्रेम से ("With open arms") स्वागत किया। क्लाइव के घर वाले भी अब उसकी प्रतिष्ठा करने लगे। उसके निकटस्थ आत्मीय जो पहले उसके आचरणों को देख, उस पर अप्रसन्न थे और उससे घृणा करते थे, वे भी क्लाइव को अब अपना गौरव और कुलदीपक समझने लगे। क्लाइव ने स्टिची की अपनी पैतृक ज़िमीदारी को, जो बहुत दिनों से बन्धक थी—ऋण चुका कर छुड़ा लिया। उसके पिता पर नौ हज़ार

पौंड का ऋण था, उस ऋण को भी उसने चुकाया। साथ ही, उसका विचार था कि, वह कोई ऐसा प्रवन्ध करदे, जिससे उसके माता पिता को जीते जी, किसी प्रकार का आर्थिक कष्ट न भोगना पड़े।

इस बीच में, क्लाइव एक ऐसे बुरे झंझट में फँस गया कि, उसने दो वर्ष के भीतर ही अपने पास का बचा हुआ धन उड़ा दिया। वास्तव में यह बड़े ही दुःख और आश्चर्य की बात है कि, जो मनुष्य एक देश को शासन करने की क्षमता रखता हो, वह आत्मशासन की क्षमता से वहिर्मुख हो कर, सञ्चित धन को, जो इस संसार रूपी अपार समुद्र की एकमात्र तरिणी है—इस प्रकार उड़ा दे।

पाठक गण ! क्लाइव ने पार्लियामेंट के चुनाव के बखेड़े में पड़ कर ही अपने पूर्व विचारों को उलट पलट डाला। क्लाइव के समय में भले आदमियों का धन पार्लियामेंट के चुनाव के समय खूब बहाया जाता था। क्लाइव के हृदय में भी "अहं" ने अड्डा जमा लिया था और "अहं" अड्डा क्यों न जमाता ? उसके पास खर्च करने को गाँठ में धन था और उसकी प्रतिष्ठा बढ़ाने वाले उसके मित्र भी थे। उसने ड्यूक आफ न्यूकेसिल के चुनाव का विपक्ष ग्रहण किया। उसकी इच्छा थी कि ड्यूक आफ न्यूकेसिल पार्लियामेंट में न चुना जाय और उसके बदले लार्ड सेंडविच चुने जाँय। लार्ड सेंडविच के पक्ष में मिस्टर फाक्स थे जिन्होंने वारिन हेस्टिंज को दोषी ठहराने में मिस्टर बर्क का साथ दिया था। यदि क्लाइव को कमिटी की इच्छा का

हाल पहिले मालूम हो जाता, तो सम्भव था कि उसका अधिक धन व्यय न होता। किन्तु जो कमिटी चुनाव के लिये गठित की गयी थी, क्लाइव को उस कमिटी की राय प्रथम तो अपने अनुकूल जान पड़ी, पर पीछे से कमिटी ने अपनी इच्छा के विरुद्ध विचार बदल दिया।

इसी घटना से क्लाइव को पुनः भारतवर्ष आने का विचार बाँधना पड़ा। उधर कंपनी के डाइरेक्टरों को भारतवर्ष की उस समय की स्थिति को सुन कर, इस देश में भावी युद्धों के लिए एक दक्ष रणकुशल मनुष्य की खोज हो रही थी, जो कंपनी की भारतवर्षस्थित सेना का पूरा भार उठा सके।

अतएव सन् १७५५ ई० में क्लाइव को इङ्गलैंड से भारतवर्ष के लिए दूसरी बार प्रस्थानित होना पड़ा। द्वितीय बार क्लाइव चालीस रुपये मासिक की अभागी क्लार्कशिप पर नहीं आया था। इस बार वह सेंट डेविड दुर्ग का गवर्नर और भारतवर्ष में कंपनी की सम्पूर्ण सेनाओं का लेफटिनेंट कर्नल हो कर रवाना हुआ था।

जब क्लाइव द्वितीय बार यहाँ आया, तब इस देश की राजनैतिक दशा में विचित्र परिवर्तन हो गया था। कुचक्री डूपले स्वदेश को लौट गया था और उसके उत्तराधिकारी गोधन (Godhan) ने अंगरेज़ गवर्नर मिस्टर सॉंडर्स के साथ सन्धि कर ली थी। इस सन्धि के नियमों के अनुसार फरासीसी और अंगरेज़ व्यापारियों को समुद्रतट के सब नगरों में व्यापार करने

का समान अधिकार प्राप्त था। अब मोहम्मदअली को उभय पक्षवालों ने आरकट का नवाब मान लिया था।

कहावत प्रचलित है कि 'विल्ली के भाग से छींका भी टूट पड़ता है" सुतरां जिस समय क्लाइव यहाँ के लिए रवाना हुआ उस समय फरासीसियों और अंगरेज़ों में मोहम्मदअली के बारे में कुछ विवाद फिर चल पड़ा और इसी कार्य में एक ऐसी लोमहर्षण घटना घटी कि जिसके कारण भारत के इतिहास के पृष्ठ आज लों कलङ्कित हो रहे हैं। जिस मोहम्मदअली के लिए अंगरेज़ों को इस देश में अपने प्रतिद्वन्द्वी फ्रांस के साथ बहुत दिनों तक निरन्तर युद्ध में फँसा रहना पड़ा, उसी मोहम्मदअली के सजातीय नवाब सिराजुद्दौला ने अंगरेज़ों के साथ विश्वासघात किया। इससे घटना-प्रवाह सहसा पलट गया और अंगरेज़ों को मदरास से हटा कर, कलकत्ते में अपना अड्डा कायम करना पड़ा। इस घटना के बाद ही अंगरेज़ों द्वारा बङ्गाल-विजय किया गया।



षष्ठ अध्याय

"तरुणी कच इव नीचः कौटिल्यं नैव विजहाति।"

[मुर्शिदाबाद के नवाब का देहान्त—सिराजुद्दौला का मुर्शिदाबाद की नवाबी पाना—फ्रान्स और ग्रेटब्रिटेन में पुनः युद्ध की आशङ्का—कलकत्ते में अंगरेज़ व्यापारियों का अपने रहने के स्थानों को सुदृढ़ करना—सिराजुद्दौला का अविवेकी चापलूसों की बातों में आकर, कलकत्ते पर चढ़ाई करना—फोर्ट विलियम पर आक्रमण—अंगरेज़ क़ैदियों को अभय वाणी—काल कोठरी की रुधिर-शोषक घटना]

सन् १७५६ ई० के एप्रिल मास में बङ्गाल के अन्तर्गत मुर्शिदाबाद के नवाब अलीवर्दीखाँ का देहान्त हुआ और इससे सिराजुद्दौला को कम उमर में मुर्शिदाबाद की नवाबी मिली। बङ्गाल भाषा के लेखक अब सिराजुद्दौला को अच्छा सिद्ध करने की चेष्टा करते हैं, परन्तु अङ्गरेज़ इतिहास लेखकों ने उसको निष्ठुर, दुष्टप्रकृति और क्षुद्रहृदय बतलाया है। * अंगरेज़ इतिहास-लेखक तो यहाँ तक लिखते हैं कि, नवाब को अंगरेज़ जाति के प्रति हार्दिक घृणा थी। जो कुछ रहा हो, नवयुवक नवाब की हृदयविदारी निष्ठुरतापूर्ण अनेक कहानियाँ अब तक प्रचलित हैं।

जिस समय सिराजुद्दौला को मुर्शिदाबाद की नवाबी मिली, उस समय अंगरेज़ व्यापारियों की कलकत्ते में वैसी ही स्थिति थी जैसी स्थिति उनकी आरम्भ में मदरास में थी। कलकत्ते में जो

---

*Guilty of the most detestable cruelties and full of implacable hatred towards the English.

भूमि उनके अधिकार में थो, उस भूमि पर उनको कर देना पड़ता था और अन्य भूस्वामियों की भाँति उनको भी अपनी अधिकृत भूमि में कुछ अधिकार प्राप्त थे। अंगरेज़ व्यापारियों का वास्तविक उद्देश्य अभी तक बङ्गाल में केवल व्यवसाय मात्र हो था।

इसी समय योरुप में फ्राँस और ग्रेटब्रिटिन में लड़ाई छिड़ जाने की आशङ्का उत्पन्न हुई और अंगरेज़ व्यापारियों ने, फरासीसियों से अपनी और अपने माल मता की रक्षा करने के लिए कलकत्ते में अपने रहने के मकानों और अन्य अधिकृत स्थानों को सुरक्षित और सुदृढ़ बनाकर अपनी दूरदर्शिता का परिचय दिया।

कोई कोई मनुष्य ऐसे क्षुद्र और दुर्बल मन के होते हैं जो दूसरों की निन्दा करने में ही अपना और अपने स्वामी का कल्याण समझते हैं, परन्तु वास्तव में ऐसे चापलूस लोग उभय पक्ष का अनिष्ट करते हैं। अंगरेज़ व्यापारियों को अपने रहने के गृह और अन्य स्थानों को सुदृढ़ बनाते देख, नवाब साहब के मुँह लगे चापलूसों ने नवाब के कण्ठ में यह बात उतार दी कि, कलकत्ते में रहने वाले अंगरेज़ व्यापारी उसके (नवाब के) विरुद्ध किलाबन्दी कर रहे हैं और वे लोग बहुत जल्द नवाब के मित्र फरासीसियों पर चढ़ाई करने वाले हैं।

दैवात् इसी समय नवाब साहब के कई एक कोपभाजन कर्मचारी कठोर दण्ड से परित्राण पाने के अर्थ, मुर्शिदाबाद को छोड़ कलकत्ते भाग गये। इस घटना से नवाब साहब को चापलूसों की कही हुई बातें, रत्ती रत्ती सत्य जच गयीं। अनन्तर

कुछ लोगों ने नवाब से कहा कि, अंगरेज़ व्यापारियों के पास अपार सम्पत्ति है और उनको पराजित करनेवाले को बहुत सा धन भी मिल सकता है।

मित्र फरासीसियों को बचाने की कामना, कोपभाजन कर्मचारियों को दण्ड देने को उत्कट उत्कण्ठा और अपार धन हाथ लगने की लालसा ने, नवयुवक नवाब सिराजुद्दौला को अंगरेज़ों पर आक्रमण करने के लिए विवश किया। उस ने प्रथम तो मुर्शिदाबाद के निकट क़ासिम बाज़ार वाली अंगरेज़ व्यापारियों की कोठी लूटी और उस कोठी में जो धन मिला, उसको अपने हस्तगत कर, कोठी में रहनेवाले अंगरेज़ व्यापारियों को बन्दी बनाया। अनन्तर उसने पचास सहस्र पैदल सेना और कई एक तोपखानों के साथ कलकत्ते पर चढ़ाई की।

कहते हैं, जिस समय सिराजुद्दौला ने कलकत्ते के विलियम दुर्ग पर आक्रमण किया, उस समय अंगरेज़ों की सब मिला कर कुल संख्या केवल पाँच सौ के लगभग थी। तीन दिन लों पाँच सौ अंगरेज़ों ने आत्मरक्षा के अर्थ नवाब के पचास हज़ार सुशिक्षित सैनिकों से युद्ध कर, चतुर्थ दिवस विजय की आशा परित्याग करके, अपनी स्त्रियों और बच्चों को जहाज़ों पर पहुँचा दिया। जो लोग स्त्रियों और बच्चों को जहाज़ पर पहुँचाने गये थे, उनमें से भी बहुत कम लोग दुर्ग में लौट कर आये। बहुत से तो स्त्री और बच्चों की ममता में पड़, स्वदेश और स्वजाति को ममता को एक साथ तिलाञ्जलि दे, जहाज़ों पर बैठे रहे।

जीवन के लिये भागने वाले और रणभीरु इन अंगरेज़ों में फोर्ट विलियम के गवर्नर और कर्नल नाम को कलङ्कित करने वाले ड्रेक साहब भी थे। गवर्नर के इस प्रकार जान लेकर भाग जाने पर, दुर्ग में बचे हुए वीर अंगरेज़ों ने हालवेल साहब को दुर्ग का गवर्नर बना लिया। नवाब की पचास सहस्र सेना और कई एक तोपखानों की निरन्तर मार के सामने, भला ये बेचारे मुट्ठी भर अंगरेज़ कब तक ठहर सकते थे—सो अन्त में पाँचवें दिन तीसरे पहर अंगरेज़ों ने आत्म-समर्पण किया।

अनन्तर जो पैशाचिक व्यवहार इन लोगों के साथ किया गया, उसको सुन कर अंगरेज़ जाति ही नहीं, किन्तु योरप की सारी जातियों का हृदय काँप उठा। जिन अंगरेज़ों ने आत्म-समर्पण किया था—वे सब नवाब साहब के सामने पंक्तिबद्ध करके खड़े किये गये। नवाब ने हालवेल साहब को इस युद्ध के लिए बहुत धिक्कारा। किन्तु साथ ही उन कैदियों को विश्वास भी दिलाया कि, उनका प्राण अपहरण नहीं किया जायगा। यह ऊपरी अभयवाणी देकर, नवाब साहब तो अपने आरामगाह में तशरीफ ले गये और ये क़ैदी एक अंगरेज़ी बारक में एकत्र किये गये। इस बारक के एक छोर पर अंगरेज़ी फ़ौजी कैदियों के लिये हवालात के ढंग की एक कोठरी थी, जिसका अंगरेज़ी नाम काल-कोठरी (Black hole) था। कलकत्ते में यह काल कोठरी सन् १८१८ ई० तक, जैसी की तैसी बनी थी, पर बाद में वह गिरा दी गयी। इस कालकोठरी का स्मारक कलकत्ते में अभी तक मौजूद है।

कहते हैं, इसी कालकोठरी में वे १४६ अंगरेज़ कैदी भेड़ों की तरह ठूँस दिये गये। प्रथम जब नवाब के सिपाहियों ने, जो उन लोगों पर निगहबानी करने के लिए नियुक्त किये गये थे, उन १४६ लोगों से उन बीस वर्ग फीट की कोठरी में जाने के लिए निर्देश किया, तब उन लोगों ने अपने रक्षकों की उस बात को हँसी की बात समझी। परन्तु जब सिपाहियों ने तलवारें म्यान से खींच कर और डंडों को हाथ में ले कैदियों को प्राण-भय दिखलाया, तब वे लोग उस कोठरी में घुसने के लिए विवश हुए।

रात्रि का समय, बङ्गाल की गर्म्मी और एक अति छोटी कोठरी * में १४६ मनुष्य ठूस दिये गये। ऐसे स्थान की यम-यातना का कुछ भी विचार न कर नवाबी गारद ने १४७ कैदियों को कोठरी में ठूस बाहर से कोठरी का दर्वाज़ा बन्द कर ताला डाल दिया। थोड़ी ही देर बाद उस कोठरी में हृदयविदारी दृश्य आरम्भ हुआ। ज्यों ज्यों रात्रि बढ़ती गई वैसे ही वैसे कैदियों का कष्ट बढ़ता गया। स्वच्छ हवा के न मिलने से और सांस

---

* इस कोठरी का वर्ग फल बतलाने में अंगरेज़ इतिहास-लेखकों का मतभेद पाया जाता है। मिस्टर होम्स इस कोठरी का वर्गफल २० फीट बतलाते हैं और डाक्टर पोप ने Text book of Indian History में तथा हालवेल साहब ने (जो स्वयं इस कोठरी में मृतः-प्राय दशा को प्राप्त हुए थे) अपने पत्र में इस कोठरी का वर्ग फल केवल १८ फीट ही लिखा है। यह कोठरी तीन ओर से बन्द थी केवल एक दीवार में पवन के आने जाने के लिए सिर्फ दो खिड़कियाँ थीं।

लेने में कठिनता होने से दम घुटने लगा; प्यास के मारे ओठ सूखने लगे और कोई कोई कैदी तो अचेत हो मूर्छित भी होने लगा। कोठरी के बीच में जो लोग पड़ गये थे, उनकी यातना का तो कहना ही क्या था। उनकी यातना पराकाष्ठा को पहुँच गयी और उनमें कई आदमी उस यातना से ही नहीं, किन्तु सभी सांसारिक यातनाओं से एकदम छूट गये। इन लोगों के मरने से और गर्म्मी अधिक होने के कारण कोठरी के अन्दर मुर्दे सड़ने लगे। मुर्दों के सड़ते ही असह्य दुर्गन्ध भी उत्पन्न हुई और कोठरी में अब "पानी दो" "पानी दो" का गगनभेदी नाद होने लगा।

हालवेल साहब ने उस कुत्ते की मृत्यु से बचने के लिए गारद के हवलदार को खिड़की के पास बुला, धन का लालच दिखलाया और हवलदार कुछ समय के लिए बाहर गया भी परन्तु लौटकर उसने यही संदेसा सुनाया कि, "नवाब साहब सो रहे हैं और उनको सोते से जगाना अपनी मृत्यु को बुलाना है"। पाठको! जिस समय मनुष्य देहधारी वे हतभाग्य प्राणी उस कोठरी में विषयुक्त पवन के कारण अचेत हो हो कर मृत्यु की गोद में सो रहे थे, उस समय नवयुवक नवाब मुलायम गद्दे तकियों से लिपट कर, सुखनींद में खुर्राटे भर रहा था और उसकी सेना के कुछ नरपिशाच, उन कैदियों की यंत्रणा का सुखानुभव करने के लिए, जलती मशालें हाथों में लेकर, खिड़कियों के पास खड़े मृत्युक्रीड़ा को देख, प्रसन्न हो रहे थे!

जब आर्त्तस्वर से वे हतभाग्य अंगरेज़ एक एक चिल्लू जल के

लिए प्रार्थना करने लगे, तब कुछ सहृदय सिपाहियों का हृदय द्रवीभूत हुआ और उन लोगो ने मशकों में पानी भर के कैदियों को खिड़कियों के सीखचों में से जल पिलाना आरम्भ किया। जल आते ही कोठरी में बड़ी खलबली पड़ गयी। सब लोग सब से प्रथम जल पीने के लिए व्यग्र होने लगे। जिस प्रकार कृष्ण भगवान् की माया से गान्धारी ने अपने पुत्रों के मृतशरीरों को तर ऊपर रख, उनकी छातियों के ऊपर खड़े होकर, भूख बुझाने के लिए एक बदरी फल (बैर) तोड़ने की चेष्टा की थी, वैसे ही ये क़ैदी भी अपने आत्मीय मित्रों और कुटुम्बियों के मृतशरीरों को पैरों से कुचलते हुए, जल पीने को किसी तरह खिड़की तक पहुँचने की चेष्टा करने लगे।

ज्यों त्यों वह चिरस्मरणीय रात्रि व्यतीत हुई। प्रातः काल होते ही इस घटना की ख़बर नवाब को लगी। उसने इस शोकप्रद घटना पर अणुमात्र भी शोक प्रकट किये बिना ही, बड़ी घबड़ाहट से हलावेल साहब के जीवित रहने की बात पूछी। पाठक क्या बतला सकते हैं कि, हालवेल साहब पर नवाब साहब क्यों इतने अनुरक्त थे ? कारण यही था कि, नवाब साहब से लोगों ने कह दिया था कि विलियम दुर्ग में बहुत धन गड़ा हुआ है, जो हालवेल को ही मालूम है। यदि हालवेल मर गया तो नवाब को गड़ा हुआ धन कौन बतलावेगा ? यह धन की लिप्सा थी, जिससे नवाब साहब ने हालवेल की ख़ैराफियत जबरन पुछवाई। नवाब ने हालवेल का हाल जानने के लिए व्यग्र हो स्वयं जाकर कोठरी का दर्वाजा खुलवाया। दर्वाजा खुलने

पर १४६ में से केवल २३ क़ैदी जीवित बचे। जो मर गये थे उनके मृतकशरीरों को टाँग पकड़वा कर, खिचवाते हुए कोठरी के समीप एक गड्ढे में फिकवा, उसको मिट्टी से बंद करवा दिया। जो लोग जीवित थे, उनकी सूरतें एक रात्रि में ही बिलकुल बदल गयी थीं। उनके पास रहने वाले उनके कुटुम्बी भी यदि उनको उस दिन देखते, तो कदाचित्त ही वे उनको पहिचान पाते।

काल कोठरी की उक्त घटना को हमारे * बङ्गाली विद्वान न मान कर निष्ठुर हृदय सिराजुद्दौला को निर्दोष सिद्ध करते हैं। कालकोठरी की घटना को लगभग १५० वर्ष व्यतीत हो चुके। कालकोठरी भी गिरवा दी गयी। ऐसी दशा में अर्वाचीन लेखक कालकोठरी की घटना को भले ही मिथ्या सिद्ध करके सिराजुद्दौला की निष्ठुरता और उसके विश्वासघात को इतिहास के पृष्ठों से मिटाने की चेष्टा करें, पर अतीतकाल में सिराजुद्दौला के सजातियों ने जैसे असानुषिक अत्याचार भारतीय प्रजा पर किये हैं, जिनको अर्वाचीन लेखक भी स्वीकार करते हैं और जिन अत्याचारों से भारत के इतिहास में मुसलमानी-काल (Mohamedan Period) के अध्याय के अध्याय अब तक पूर्ववत कलङ्कित हो रहे हैं, उनको देख सुन कर विचारशील लोग कालकोठरी की घटना के विषय में—धूम देख कर पर्वत पर अग्नि का होना, सहज ही अनुमान कर सक्ते हैं।

---

* सिराजुद्दौला के विषय में बङ्गला भाषा में एक पुस्तक छपी है।

बीते समय के नवाब और नादिरशाह से अत्याचारी अब नहीं हैं, परन्तु इतने सालों के बाद भी जब कभी किसी भीषण अत्याचार की उपमा दी जाती है तब "नादिरशाही" अथवा "नवाबी" अत्याचार ही स्मरण हो आते हैं। सैकड़ों वर्षों पूर्व पाश्चात्य आक्रमणकारियों और उनके भारतीय वंशधरों ने जो अत्याचार भारत की सीधी और भोली प्रजा पर किये थे, उसके पाठ और स्मरण मात्र से आज भी सहृदय लोगों के हृदय काँपने लगते हैं। अर्वाचीन इतिहास लेखकों ने कालकोठरी की घटना को लेकर इसलिए भारतीय इतिहासों के पृष्ठों को काला किया है कि कालकोठरी की घटना में भुक्तभोगी अंगरेज़ थे; नहीं तो सम्भव था, बहुत से अन्य नवाबी अत्याचारों की भाँति काल-कोठरी की घटना को भी भारत इतिहास में कहीं स्थान न मिलता और ऐसा होने से हमारे बङ्गाली लेखकों का लिखना लोगों को सत्य भी जच जाता। परन्तु वास्तव में बात यही है कि, काल कोठरी की घटना जो इतिहासों में वर्णित है, वह अक्षर अक्षर सत्य हैं।

देवमन्दिरों को नष्ट भ्रष्ट करना देवमूर्तियों को तोड़ कर अपने महलों की सीढ़ियों में जड़वाना और घरों में घुस कर हिन्दू नारियों के सतीत्व को नष्ट करना, अनेक मुसलमान बादशाहों और नवाबों का खेल कहा जाय, तो अत्युक्त न होगा। औरों की बात न सही, कुटिल नीतिज्ञ अकबर बादशाह की नीति पर ही यदि विचार किया जाय, तो उसने भी हिन्दूजाति को बिगाड़ने में और उसकी विशुद्धता नष्ट करने में कोई कोर कसर नहीं

की। राजपूतों की कन्याओं के साथ विवाह करने में वह भी न चूका और जिसने उसकी इस नीति का प्रतिवाद किया वही अकबर का शत्रु हुआ। जहाँ तक हो सके, हिन्दू नारियों के सतीत्व को बिगाड़ना अतीत काल के अधिकांश मुसलमानों ने प्रायः एक नियम सा बना रक्खा था। सो उसी नियम के अनुसार सिराजुद्दौला ने काम किया।

उन बचे हुए २३ कैदियों में एक रूपवती गौराङ्गी युवती भी थी। उस युवती पर नवाब साहब की नियत डिग गयी और उसको ज़बरदस्ती आपने अपने ज़नानख़ाने (Harem) में दाखिल कर लिया। अन्य बाइस अंगरेज़ों की तलाशी ली गयी जिनके पास कुछ भी धन निकला, उनको रिहाई मिली, पर जो धनहीन थे जिनके पास कुछ नहीं था, उनके साथ बड़ा निष्ठुर व्यवहार किया गया।

इस घटना की आलोचना करते हुए कुछ लोग नवाब को निर्दोष बतला-नवाब के सिपाहियों को दोषी ठहराते हैं। क्योंकि क़ैदी अंगरेज़ों द्वारा युद्ध में नवाब के सिपाहियों के सम्बन्धी मारे गये थे। कहा जाता है, इसी पलटे में सिपाहियों ने उन क़ैदी अंगरेज़ों के साथ वह अमानुषिक व्यवहार किया था। यदि यही बात रही हो तो इन लोगों को भी नीच प्रकृति का कहना अत्युक्त न होगा। क्योंकि जापान युद्ध में पराजित रूसी सैनिकों के साथ विजयी जापानियों ने जैसा व्यवहार किया था, उसके लिए सभ्य समाज के सभी लोग आज लों जापान के सैनिकों की सहस्रमुख से श्लाघा कर रहे हैं। यह नियम है कि, सैनिक अपने अफ़सर

और शासक की इच्छा के अधीन रह कर ही काम करते हैं। अतः इस अमानुषिक कार्य में नवाब का हाथ नहीं था—बिना किसी प्रबल प्रमाण के पाये, इस पर, सहसा विश्वास करने को हमारा जी नहीं चाहता।

दूसरे दिन जब कालकोठरी की घटना सिराजुद्दौला को सुनायी गयी और जब स्वयं उसने जाकर कोठरी खुलवाई, तब उसने अपनी अभयवाणी के विरुद्ध कार्य करने वालों को दण्ड देना तो एक ओर रहा, उनको धिक्कारा तक नहीं। अपने अधीनस्थ सैनिकों को दण्ड न दिया तो न सही, किन्तु जिन निरपराध अंगरेज़ों को अभयवाणी देकर भी उनके प्राण लिये गए थे, उनके मृत शरीरों के प्रति मनुष्यत्व का ही विचार कर, उचित व्यवहार तो किया होता और उनको भली भाँति समाधि तो दी होती तथा जीवित लोगों के साथ (प्रायश्चित्त स्वरूप) अच्छा व्यवहार तो किया होता; किन्तु नहीं—अच्छा व्यवहार करना तो एक ओर रहा, उसने अङ्गरेज़ जाति के सभी व्यापारियों को विलियम दुर्ग के आस पास रहने का भी निषेध कर दिया।



सप्तम अध्याय

"उष्णो दहति चाङ्गारः शीतः कृष्णायते करम्"

[मदरास में कालकोठरी की घटना की ख़बर—अंगरेज़ों में हलचल—सिराजुद्दौला से बदला लेने के लिए क्लाइव का प्रस्थान—अंगरेज़ों का हुगली पर पुनः अधिकार—नवाब से सन्धि की बातचीत—नवाब का फरासीसियों से मिलकर षड़यंत्र रचना—चन्द्रनगर पर अंगरेज़ो अधिकार—सिराजुद्दौला के विरुद्ध कुटिल मंत्रणा—हिस्सा बाँट की बात—जाली सन्धि-पत्र और जाली हस्ताक्षर]

कालकोठरी की हृदय-विदारी घटना के समाचार मदरास स्थित अंगरेज़ व्यापारियों से अधिक दिनों तक न छिप सके। सन् १७५६ ई० की ग्रीष्म ऋतु में सेंट डेविड दुर्ग में यह वृत्तान्त पहुँचते ही, हाहाकार मच गया। जिन अंगरेज़ों के कुटुम्बी अथवा जिन स्त्रियों के पति कालकोठरी की घटना में निष्ठुरता पूर्वक मारे गये थे उनके आर्तनाद से सेंट डेविड दुर्ग गूँज उठा।

जिस समय का यह हाल है, उस समय तक, पाश्चात्य विज्ञान का आधिपत्य, इस देश में जमने नहीं पाया था। इन दिनों की भाँति कलकत्ते की खबर मदरास तक तार द्वारा मिनटों में नहीं पहुँचती थी। इससे कलकत्ते में एप्रिल मास में सङ्घटित घटना का समाचार सेंट डेविड दुर्ग में जून मास में और मदरास में अगस्त मास में पहुँचा। मदरास में इस समाचार के प्रकाशित होते ही, 'बदला' 'बदला' (Revenge) लेने की ध्वनि से नगर प्रतिध्वनित होने लगा। बदला किस प्रकार और कौन ले—इन

बातों का विचार होने लगा। अन्त में नवाब को दूज का बदला तीज देने की लालसा से, लोगों को क्लाइव का स्मरण हुआ और उसको बुलाने के लिए सेंड डेविड दुर्ग को प्यादे रवाने किये गये।

इङ्गलेंड से आने के बाद क्लाइव वाटसन के साथ अंजोरिया नामक समुद्री लुटेरों का एक समुद्री अड्डा जीत चुका था और जिस समय उक्त लोमहर्षण घटना के समाचार सेंट डेविड दुर्ग में प्रकाशित हुए उसके थोड़े ही काल पूर्व क्लाइव घेरिया (Gheriah) को कंपनी के पूर्ण अधिकार में करके लौटा था। कहते हैं समुद्री डाकुओं के अड्डे में क्लाइव को डेढ़ लाख पौंड का माल मिला था। आरकट दुर्ग की रक्षा करने में जिस वस्तु की आवश्यकता नहीं थी और अंजोरिया तथा घेरिया को अधिकृत करने के लिए जिस वस्तु की अपेक्षा नहीं थी, उस वस्तु की अपेक्षा क्लाइव को अब आन पड़ी। नवाब को उसके दुष्ट-कर्मों का फल चखाने के लिए क्लाइव को उच्चकोटि के रणपण्डित होने के साथ ही, सुदक्ष राजनैतिक क्षमता प्रदर्शन करने का अवसर प्राप्त हुआ।

क्लाइव नौ सौ गोरे सैनिक और पन्द्रह सौ देशी सिपाही अपने साथ ले, नवाब को उसके कुकर्मों का फल चखाने के लिए रवाना हुआ। क्लाइव के साथ यद्यपि गोरे और देशी सब मिला कर केवल चौबीस सौ ही योद्धा थे, तथापि इन योद्धाओं में प्रत्येक का बल दस साधारण सिपाहियों के तुल्य था। ये लोग अपने अफ़सर क्लाइव की आज्ञा पालनार्थ प्राण तक दे देने वाले थे। क्लाइव अक्टूबर मास में अपनी वाहिनी

सहित जल मार्ग से रवाना हो दिसम्बर मास में हुगलो पहुँचा अर्थात कालकोठरी की घटना से नौ मास बाद अंगरेज़ लोग नवाब से उसके दुष्ट कर्मों का बदला लेने के लिए हुगली पहुँचे। क्लाइव ने पहुँचते ही क्रमशः बजबज, कलकत्ता, फोर्टविलियम आदि स्थानों पर अपना अधिकार जमाया। बजबज लेते समय वारिन हेस्टिंग्ज़* ने वालंटियर बन कर युद्ध किया और सब से प्रथम क्लाइव और वारिन हेस्टिंग्ज़ का परस्पर परिचय बजबज में ही हुआ। यद्यपि क्लाइव और हेस्टिंग्ज़ की अवस्था में केवल सात वर्ष का ही अन्तर था; तथापि क्लाइव की ख्याति अधिक हो गयी थी। क्लाइव को देख कर हेस्टिंग्ज़ को विश्वास हो गया था कि चेष्टा करने पर वह भी क्लाइव की भाँति किसी दिन अपनी उन्नति कर सकेगा। हेस्टिंग्ज़ ने उन्नति की, परन्तु रणक्षेत्र द्वारा नहीं। क्लाइव की अनुमति से उसने सिविलियन बना रहना ही स्वीकार किया।

कलकत्ते से २५ मील आगे जब क्लाइव ने धनसम्पन्न समृद्धशाली हुगली नगर पर अंगरेज़ों का खोया हुआ अधिकार पुनः प्राप्त किया, जिसमें कप्तान आइर कूट (Eyre Coote) की बड़ी वाहवाही हुई थी; तब नवाब साहब की मोहनिद्रा भङ्ग हुई और सन्धि के लिए प्रस्ताव किया। करनाटक और अंजोरिया आदि युद्धों में क्लाइव की वीरता और दृढ़ता का वृत्तान्त सिरा-

---

*वारिन हेटिंग्ज़ की भी उन्नति इसी देश में हुई थी। एक साधारण व्यक्ति होने पर भी वह इस देश का अधीश्वर बन गया था। इसकी भी जीवनी प्रकाशित हो गयी है।

जुद्दौला सुन चुका था। क्लाइव की वीरता उस समय इस देश में इतनी प्रसिद्ध थी कि, लोग क्लाइव को "साबित-जङ्ग" (Sabitjang Firm in fight) कहने लगे थे।

जिन अंगरेज़ों को सिराजुद्दौला ने लूटा था, उनका हर्जा भी देने को अब नवाब राज़ी था। लूटे हुए धन को फेर देने के लिए तो नवाब साहब राज़ी हो गये थे, परन्तु १२३ जानों के लिए नवाब साहब ने क्या हर्जा देना विचारा था, इसका इतिवृत्ति किसी इतिहास-लेखक ने नहीं लिखा।

क्लाइव के जीवन में यह समय उसके लिए बड़ा नाज़ुक था। अभी तक उसने जो ख्याति और विजय प्राप्त की थी उसका प्रधान कारण क्लाइव की वीरोचित प्रकृति थी, किन्तु अब उसके लिए राजनैतिक प्रतिभा दिखलाने का समय उपस्थित हुआ था। क्लाइव का यदि वश चलता तो वह अप्रतिहत उत्साह और वीरगति से आगे बढ़ कर और घोर संग्राम कर, शत्रु को उसके दुष्ट कर्मों का पूरा फल चखाता; पर यह मामला अब पञ्चायत में पड़ गया और इसीलिए एक प्रकार से क्लाइव की स्वतन्त्रता अपहृत हो गयी; जिससे दुष्ट कुकर्मी नवाब को उचित दण्ड मिलने में विलम्ब हुआ।

जिस कमिटी के आधीन यह कार्य हुआ था, उसकी इच्छा नवाब के साथ सन्धि कर लेने की थी। अतः सन्धि के लिए पैग़ाम भुगतने लगे। सन्धि की बातचीत वाटसन साहब, (जो कंपनी के एक कर्मचारी थे) और अमीचन्द द्वारा होती थी। इन दोनों के बीच में जो बातचीत होती थी उसका अन्तिम

परिणाम अच्छा हुआ। इसका कारण अंगरेज़ इतिहास-लेखकों ने क्लाइव में राजनैतिकपूर्ण ज्ञान की कमी बतलाया है। यद्यपि सन्धि का मामला कमिटी में पड़ा हुआ था; तथापि कमिटी पर सर्व-प्रधान अधिकार क्लाइव का ही था; क्योंकि वह स्वयं योद्धा भी था। क्लाइव में राजनैतिक निपुणता का अभाव होने से ही, सन्धि सम्बन्धी उस समिति का कोई निश्चित सिद्धान्त ही न हो पाया और अन्त में इस समिति के मन्तव्यों के विरुद्ध क्लाइव को कार्य करना पड़ा। इस सन्धि के मामले ने क्लाइव के चमकते हुए चरित्रों पर एक काला पर्दा डाल दिया। क्लाइव की शुद्ध देश-हितैषिणी सुकीर्ति रूपी ज्योत्स्ना में, उसकी मानसिक निर्बलता और धन के प्रलोभन से अन्धकार छा गया।

वाटसन की इच्छा के विरुद्ध नवाब और अंगरेज़ों में सुलह हुई और नये सन्धिपत्र के अनुसार बङ्गाल में अंगरेज़ों को पुनः अधिकार प्राप्त हुए। परन्तु वाटसन की इच्छानुसार इस सन्धि से दुष्ट नवाब को उसके घोर दुष्टकर्म का कड़ा दण्ड न मिला। इसका कारण यही था कि, क्लाइव को अपने राजनीतिज्ञ होने का अभिमान हो गया था और इसीलिए वह अपनी राजनैतिक दृष्टि से सन्धिपत्र पर हस्ताक्षर करने को राज़ी हुआ। क्लाइव को राज़ी होते देख, लोगों को इस बात का आश्चर्य हुआ कि ब्रिटिश जाति ने अपने साथ निष्ठुर व्यवहार करने वाले को उचित शिक्षा दिये विना ही क्योंकर सन्धि कर ली।

यूरुप में "सात वर्ष व्यापी युद्ध" ("Seven Years' War") आरम्भ हुआ। नवाब को यह अच्छा अवसर हाथ लगा। उसने

बङ्गाल के अंगरेज़ों से सन्धि तो की, पर अपने पुराने कृपापात्र फरासीसियों से दक्षिण-प्रान्त-स्थित अंगरेज़ों को दबाने के लिए अनुरोध किया। नवाब को विश्वास था कि, ऐसा करने से बङ्गाल-स्थित अंगरेज़ी सेना जब दक्षिण में अपना अधिकार बनाये रखने को जावेगी तब बङ्गाल अनायास खाली हो जायगा और पूर्ववत् वह पुनः बङ्गाल में बिना किसी आपत्ति के, नवाबी करेगा। नवाब की यह चाल यद्यपि उसके एक अच्छे राजनैतिक होने का परिचय देती है, तथापि जब मनुष्य के जीवन का कटोरा पापों से लबालब भर जाता है, तब अच्छी चाल भी बुरी हो जाती है।

यद्यपि यूरुप में फ्राँस और इङ्गलेंड से युद्ध छिड़ गया था; तथापि क्लाइव की इच्छा भारतवर्ष में फ्राँस के साथ सुलह बनाये रखने की ही थी। किन्तु क्लाइव को जब नवाब साहब की कुटिलता का पता लगा, तब उसने एडमिरल वाटसन के अनुमोदन से फरासीसियों के भारतीय उपनिवेश चन्द्रनगर पर आक्रमण करना निश्चित किया। नवाब और अंगरेज़ों में जो सन्धि हुई थी उसके अनुसार नवाब से जब चन्द्रनगर पर आक्रमण करने के लिए सहायता देने को कहा गया, तब उसने ऐसा करने से सहसा नाहीं की, किन्तु उसने गुप्तरूप से फरासीसियों की धन और युद्ध सामग्री द्वारा सहायता की।

चन्द्रनगर पर अंगरेज़ों ने हमला किया और जब तक फरासीसियों को सहायता के लिए सेना आवे ही आवे, तब तक अंगरेज़ों ने चन्द्रनगर पर पूर्ण अधिकार जमा लिया। इस युद्ध में वास्तव में एडमिरल वाटसन ने ही विजय प्राप्त किया था।

यह एडमिरल कलकत्ते में मरा और उसके समाधि स्तम्भ पर अब तक यह लिखा है:—

Gheriah taken, February 31; 1756.
Calcutta, January 2. 1757.
Chandernagore taken March 1757.
"Exegi ti Monumentem aere perennius."

नवाब ने जो कुचक्र रचा था; उसके अनुसार यद्यपि उसको कुछ भी सहायता नहीं मिली; तथापि उसकी दुष्टता की मात्रा में कुछ भी कमी नहीं हुई। एक ओर तो उसने अंगरेजों को सन्धि के अनुसार हर्जे की एक किश्त भेजी और दूसरी ओर कटक प्रान्त से बङ्गाल प्रान्त पर आक्रमण करने के लिए फरासीसी बिसी (Bussy) से अनुरोध किया। पाठक जानते होंगे कि कटक और कलकत्ते के बीच दो सौ मील से अधिक अन्तर नहीं है।

नवाब सिराजुद्दौला आसुरिक तलवार बल से, अहङ्कार की प्रतिमूर्ति बनकर, उदारता की नीति पर पदाघात करता हुआ अपनी प्रजा, अपने अधीनस्थ कर्मचारियों और अपने शुभचिन्तक मित्रों को भी अपना घोर शत्रु बना चुका था। जिस नवाब का घर ही शत्रुपूर्ण था, जिसके मित्र ही शत्रु थे, प्रजा शत्रु थी, स्वजन शत्रु थे और कर्मचारी शत्रु थे—जिसके सब लोग शत्रु ही शत्रु बन चुके थे; जो सब को शत्रु बना कर, अहर्निशि शत्रुपुरी में वास करता था, वह नवाब सिराजुद्दौला भला कब सुखी रह तथा अपनी सेना पर निर्भर रह कर, प्रतापशाली विदेशियों का सामना कर सकता था? नवाब की प्रजा उसके अत्याचारों से व्यथित हो, उसको नवाबी से उतार देने के लिए व्यग्र हो रही

थी। जब नवाब साहब स्वयं अत्याचारी थे, तब उनके अधीनस्थ कर्मचारी उनसे भी बढ़ कर प्रजा पर अत्याचार किया करते थे। नवाबी और बादशाही शासन काल में जो जो अत्याचार इस देश की प्रजा पर किये गये, उनका स्मरणमात्र अब भी हृदय को कँपा देने की शक्ति रखता है।

पाठको! हमारा यही भारतवर्ष किसी समय अशान्ति अत्याचार और नाना प्रकार के क्लेशों की क्रीड़ास्थली बन चुका है। सैकड़ों सहस्रों सती साध्वी हिन्दूरमणियों के उष्ण अश्रुजल से इसी भारत वसुन्धरा की ज्वाला असहनीय हो चुकी है। इसी आर्यभूमि में पिता के सामने, माता के सामने, म्लेच्छ संस्पर्श से कितनी ही अभागिनी कुलवतियों का सर्वनाश हो चुका है। इसी पुण्यभूमि में हम लोगों की कितनी ही पूज्यनीय एवं रत्न जटित, देवमूर्तियाँ धन के लोभ से भङ्ग कर दी जा चुकी हैं और इसी जगद्विख्यात देश में ब्राह्मणों का एकमात्र धन, उनके अगणित अलभ्य ग्रन्थों से नवाबों और बादशाहों के हम्मामों और बावर्चीखानों में महीनों ईंधन का काम लिया जा चुका है।

ऐसे ही नाना प्रकार के अत्याचारों से उत्पीड़ित नवाब सिराजुद्दौला की प्रजा, उसके अत्याचारों से परित्राण पाने के लिए नवाब के विरुद्ध कुचक्र रचना में प्रवृत्त हुई।

बङ्गाल प्रान्त के सुप्रसिद्ध धनाढ्य, जगत सेठ नामक एक हिन्दू महाजन, नवाब की सेना के प्रधान सेनापति मीर जाफर और उनके खजानची रयदुल्ला भी इस कुचक्र में सम्मिलित हुए थे। कुचक्रियों को अपनी सफलता का पूर्ण विश्वास था। क्योंकि

मुर्शिदाबाद के रेजीडेंट मिस्टर वाच और क्लाइव की कलकत्ते वाली ब्रिटिश कौंसिल भी इस कुचक्र में सम्मिलित थी। यद्यपि समष्टि रूप से कलकत्ते की ब्रिटिश कौंसिल को इस अधर्म नीति में सम्मिलित कह सक्ते हैं तथापि इस कौंसिल में ऐसे भी लोग थे, जो ऐसी प्रपञ्चपूर्ण रचनाओं को पाप समझते और ईश्वर से डरते थे। कहने पर क्लाइव समाधान करने के लिए कह दिया करता था कि दुष्ट को जिस तरह हो दण्ड देना ही अच्छा है। क्लाइव अन्त तक अपने इस सिद्धान्त से विचलित नहीं हुआ और इसी लिए मतभेद पर कौंसिल को क्लाइव की इच्छानुसार कार्य करना पड़ा।

इन कुचक्रियों ने, कुचक्र रचना के पूर्व अपने लाभ की बातें सोच विचार कर आपस में स्थिर कर ली थीं। मीर जाफर तो अपने स्वामी के साथ विश्वासघात करने को इसलिए कटिबद्ध हुआ था कि, अन्त में उसको बङ्गाल की नवाबी मिलेगी और कलकत्ते की कौंसिल को मीर जाफर ने, बङ्गाल की नवाबी पाने पर, अंगरेज़ों को बहुत सा धन देने की प्रतिज्ञा की थी। डाक्टर पोप लिखते हैं कि, यह बात भी प्रथम से ही निश्चित हो चुकी थी कि सफलता प्राप्त होने पर, इङ्गलिश गुप्त समिति के सभ्यों में भी एक बड़ी धनराशि विभक्त की जायगी। *

प्रत्येक व्यक्ति के लाभ की बातें स्थिर हो चुकने पर भी, बीच

*While a large sum was to be distributed among the members of the English secret committee."

Dr. Pope's—British Power in Bengal P. 203

में एक झगड़ा पैदा हो गया। नवाब और अंगरेज़ों के बीच दूत-कर्म करने वाले नगरसेठ अमीचन्द थे। अंगरेज इतिहास-लेखकों के कथनानुसार अमीचन्द बङ्गाली थे; परन्तु अग्रवाल कुलोत्पन्न बाबू हरिश्चन्द्र ने "उत्तरार्द्धभक्तमाल" में अपनी वंशावली में अमीचन्द को अपना पूर्वज बतलाया है (१) और बाबू अक्षय कुमार मित्र ने स्वरचित "सिराजुद्दौला नामक पुस्तक में लिखा है "हिन्दू वणिकों में उमाचरण का नाम अंगरेज़ों के इतिहास में अमीचन्द कह कर प्रसिद्ध है"। सम्भव है, अंगरेज इतिहास-लेखकों ने बङ्गाल में वाणिज्य करने से, अमीचन्द को बङ्गाली समझा हो, किन्तु उमाचरण को अंगरेज इतिहास-लेखकों ने अमीचन्द लिखा हो यह बात हमारी समझ में नहीं आती। अस्तु जो कुछ हो। जब सब बातें नवाब और अंगरेज़ों के बीच निश्चित हो चुकीं, तब अंगरेज़ इतिहास-लेखकों के लेखानुसार अमीचन्द का लालच बढ़ा और उन्होंने कहा कि या तो उनको तीन लाख रुपये और दिये जाने की एक धारा सन्धिपत्र में

---

(१) "वैश्य अग्रकुल में प्रगट बालकृष्ण कुलपाल
ता सुत गिरधर चरन रत, वर गिरधारी लाल
अमीचन्द तिनके तनय फतेचन्द ताचन्द
हरखचन्द जिनके भये निज कुल-सागर-चन्द

\+ + +

पारवती की कूख सों तिनसों प्रगट अमन्द
गोकुल चन्दाग्रज भये भक्तदास हरिचंद"

और बाबू राधाकृष्णदासजी ने बाबू हरिशचन्द्रजी के जीवन चरित्र

बढ़ायी जाय, नहीं तो वह अब भण्डा फोड़ देंगे और भण्डा फूटते ही सब कुचक्रियों को प्राणदण्ड मिलेगा। मिस्टर होम्स से निरपेक्ष लार्ड क्लाइव की जीवनी लिखने वाले ने अमीचन्द के लिए बड़े बड़े शब्द लिखे हैं। (A treacherous villain of the deepest dye") यद्यपि अब इस प्रकार के बहुत से प्रमाण मिलते हैं जिनसे अमीचन्द पर अंगरेज़ इतिहास-लेखकों के लगाये कलङ्क नहीं लग सकते, तथापि यदि मान भी लिया जाय कि अमीचन्द ने अपने लालच की मात्रा बढ़ा दी थी, तो भी

में उनका वंशवृक्ष यों बनाया है।

रायबालकृष्ण
|
लक्ष्मीराम
|
गिरधारीलाल
|
सेठ | अमीचन्द | चन्द्रविलास

अमीचन्द के नौ बेटे थे। वंश केवल फतहचन्द का चला
|
फतहचन्द
|
बाबू हर्षचन्द्र
|
बाबू गोपालचन्द्र
|
बाबू हरिश्चन्द्र

केवल अमीचन्द को घोर पातकी समझना अधर्म है। हम देखते हैं कि, अंगरेज इतिहास-लेखकों के मतानुसार जब नवाब के कर्मचारी तथा कलकत्ते की ब्रिटिश कौंशिल के प्रायः सभी मैंबर आपादमस्तक इस पाप में सने हुए थे; तब केवल अमीचन्द के ही प्रति ऐसे कुवाच्यों का प्रयोग किया जाता है? ख़ैर, अमीचन्द ने तो केवल धमकी मात्र ही दी थी, पीछे से वह वैसा करते कि नहीं, यह बात अन्धकार में निहित है, परन्तु इस धमकी के पल्टे में जो निष्ठुर * व्यवहार और विश्वासघात अमीचन्द के साथ किया गया—क्या वह किसी घोर पाप से किसी अंश में कम है?

अस्तु, ऐन समय पर अमीचन्द को मचलते देख, कलकत्ते की इङ्गलिश सीक्रेट कमीटी साश्चर्य चिन्तित हुई। इस चिन्ता से निस्तार पाने के लिए कमिटीवालों ने नाना प्रकार की युक्तियां सोचीं परन्तु कोई भी युक्ति ठीक न बैठी। अन्त में प्रपञ्ची क्लाइव ने ईश्वर का भय छोड़, ब्रिटिश आईन के विरुद्ध अमीचन्द से बदला लेने के लिए वही अपराध किया, जिस अपराध के बहाने बेचारे नन्दकुमार फाँसी पर लटकाये गये थे।

पाठको! हमारी भाषा के अजर अमर कवि गोस्वामी श्री तुलसीदासजी ने लिखा है, "समरथ को नहिं दोस गुसाईं।" बाल्यावस्था से उद्दण्ड प्रकृति क्लाइव को बङ्गाल में सब प्रकार के अधिकार प्राप्त थे। इसके अतिरिक्त कलकत्ते की कौंसिल

* कहते हैं अमीचन्द के परिवार की १३ स्त्रियाँ, उनके नौकर और उनका घर जला दिया गया था।

क्लाइव के रोषयुक्त और सिपाहियाना मिजाज से भयभीत हो उसके हाथ की कठपुतली वन गयी थी। इस कौंसिल में केवल एक धर्मभीरु पुरुष था। उसका नाम था वाटसन। वाटसन ईश्वर से डरता था और स्वतंत्र प्रकृति का मनुष्य था। कौंसिल भर में यही एक अकेला था जो क्लाइव की वातों में हाँ नहीं मिलाता था।

क्लाइव ने धर्माधर्म का विचार परित्याग कर, दो सन्धि-पत्र तयार किये—एक सफेद रङ्ग के कागज पर दूसरा लाल रङ्ग के कागज पर। लाल रङ्ग के कागज पर जो सन्धि पत्र लिखा गया था वह अमीचन्द की इच्छानुसार था किन्तु सफेद रङ्ग के लिखे हुए सन्धिपत्र में अमीचन्द को तीन लाख रुपये देने वाली वात को चर्चा भी नहीं थी। जव दो रङ्ग के कागजों पर दो प्रकार के सन्धिपत्र तयार हो गये; तव हस्ताक्षर के लिए कमिटी के सामने वे दोनों पत्र उपस्थित किये गये। क्लाइव ने इन सन्धि-पत्रों पर हस्ताक्षर करने के लिए अनुरोध करते हुए कमिटी के मेंवरों से कहा कि, अमीचन्द से दुष्टप्रकृति एवं विश्वासघातक पुरुष के साथ हर प्रकार का वुरा व्यवहार करना न्यायसङ्गत है। अनुरोध करने पर भी एडमिरल वाटसन ने अपने को इस अधार्मिक कुकृत्य से पृथक रखा। किन्तु वाटसन की कुछ भी परवाह न कर, उद्दण्ड क्लाइव ने उन दोनों पत्रों पर वाटसन के जाली हस्ताक्षर वना लिये।

सिराजुद्दौला को नीचा दिखाने के लिए जो बेईमानी की गयी, वह अवश्यमेव गर्हनीय और तिरस्कार करने के योग्य

है। सिराजुद्दौला से असन्तुष्ट हो लोगों ने उसके सर्वनाश के लिए जो कुचक्र रचा, यद्यपि वह शासन की कठोरता और शासन के अत्याचारों का उपयुक्त प्रायश्चित्त था; तथापि क्लाइव जैसे एक प्रसिद्धि प्राप्त मनुष्य ने जो अधर्माचरण किया, वह इतिहास के पृष्ठों से कभी नही मिट सकता। सिराजुद्दौला के अपराधों के प्रायश्चित्त के लिए उसकी प्रजा भले ही उसका तिरस्कार करके, जबरदस्ती उससे नवाबी छीन लेती, परन्तु क्लाइव जैसे एक उच्च विचारशील मनुष्य को ऐसे नीच और निन्द्य काम करने के लिए कभी अग्रसर नहीं होना चाहिये था। क्लाइव की सुख्याति तो इसीमें थी कि वह प्लासी युद्ध में ही नवाब को वीरोचित साहस के साथ परास्त करके उसका सर्वनाश करता। क्लाइव के इस क्षुद्र और नीच कार्य की आलोचना करते हुए क्लाइव के स्वदेश भाइयों ने लिखा है:—

Clive perpetrated that great act of bad faith (not even an act amounting to palpable dishonesty and treachery—The Author.) which must ever remain a stain on his character.

वास्तव में क्लाइव ने यह काम ऐसा बुरा किया जिससे उसके चरित्र में सदा के लिए दाग लग गया।



अष्टम अध्याय

अचिरांशु विलास चञ्चला ननुलक्ष्मीः फलमानुषङ्गिकम् ॥

[क्लाइव की युद्ध कामना—युद्ध की तैयारी—मीरजाफ़र का पत्रव्यवहार बन्द करना—क्लाइव की युद्धसमिति के साथ मन्त्रणा—क्लाइव का हृदय दौर्बल्य—क्लाइव की सेना का पयान—प्लासी का युद्ध—२३ वीं जून सन् १७४७ का चिरस्मरणीय दिवस—नवाब की सेना का नाश—क्लाइव का रणक्षेत्र पर अधिकार—कुचक्रियों को सफलता—सिराजुद्दौला का अन्तिम परिणाम—मीरजाफ़र को बङ्गाल की नवाबी—अमीचन्द की आशा लता पर वज्रपात—अमीचन्द की शोचनीय मृत्यु—क्लाइव के विषय में डाक्टर पोप की सम्मति—क्लाइव को बङ्गालविजय से धनलाभ—फरासीसियों का पराजय—क्लाइव की द्वितीय बार इंगलैंड-यात्रा—क्लाइव को आइरिश पियर लार्ड और बैरन की उपाधियों का मिलना—क्लाइव को कामना—क्लाइव की वार्षिक आय—क्लाइव की उदारता—क्लाइव की पार्लियामेंट में बैठने की इच्छा—सलीवन और क्लाइव का झगड़ा—क्लाइव की बङ्गाल की ज़िमीदारी की आय का अपहरण—भारत में पुनः गड़बड़—पटने में विप्लव—क्लाइव की शर्तें—क्लाइव की अन्तिम भारत यात्रा।

कैसे ही क्यों न हो—क्लाइव जो चाहता था वही हो गया। दोनों सन्धिपत्रों पर हस्ताक्षर हो गये अतः क्लाइव ने अपने पत्रों का ढंग बदला और अपनी सेना को तैयार किया। उधर सिराजुद्दौला को भी क्लाइव का अभिप्राय मालूम पड़ गया और उसने भी भावी युद्ध की आशङ्का से अपनी सेना को सुसज्जित

कर अपनी सेना में युद्धघोषणा प्रचारित की। इधर से क्लाइव अपनी सेना लेकर आगे बढ़ा, उधर से सिराजुद्दौला रणातुर हो आगे बढ़ा! इन दोनों की सेनाओं की मुठभेड़ सुप्रसिद्ध प्लासी-क्षेत्र में हुई। क्लाइव के साथ* ६५० गोरे, २१०० देशी सिपाही १५० गोलंदाज और १० तोपखाने थे। और नवाब की अधीनस्थ सेना में ५००८० पैदल, १८००० घुड़सवार और कई एक तोपखाने थे।

क्लाइव के साथ मीरजाफ़र अपने स्वामी सिराजुद्दौला के साथ विश्वासघात करने की प्रतिज्ञा से आबद्ध था और इन दोनों में परस्पर पत्रव्यवहार भी चलता था। किन्तु अब भावी युद्ध की भीषणता को स्मरण कर, सिराजुद्दौला का सेनानायक मीर जाफ़र अपने मन में कुछ डरा और क्लाइव के साथ लिखापढ़ी करनी बंद कर दी। अपनी सेना से बहुत अधिक शत्रुसेना देखकर और मीर जाफ़र के सहसा परिवर्तित व्यवहार पत्र ध्यान

---

* मार्सडन साहब इन दोनों सेनाओं की संख्या इस भाँति बतलाते हैं। सिराजुद्दौला की सेना में ५०,००० पैदल १८०० घुड़सवार और ५० तोपें और कुछ फरासीसी सिपाही थे और क्लाइव के साथ ११०० गोरे, २००० देशी सिपाही और केवल दस हलकी तोपें थीं। किन्तु Beveridges's History of India Book III. p 559 में क्लाइव ने अपने पत्र में जो अपनी सेना की गणना स्वयं लिखी है, वह यह है। ६५० गोरों की एक बटालियन १०० गोलन्दाज और ६ तोपखाने, ८०० सिपाही, ६०० मल्लाह [ये मल्लाह हाल ही में आये थे।] इस प्रकार सब मिला कर २१५० सैनिक और ६ तोपखाने को लेकर, क्लाइव ने प्लासीयुद्ध के लिए तैयारी की थी।

देकर क्लाइव के मन में आशङ्का उत्पन्न हुई। उसके मन में नाना प्रकार के सङ्कल्प विकल्प उठने लगे। भविष्य में क्या करना होगा–इस बात को निश्चय करने के लिए उसने युद्ध-समिति (War-Council) आमन्त्रित की। क्लाइव ने इस प्रकार की समिति प्रथम बार ही आमन्त्रित की थी। समिति में युद्ध सम्बन्धी विषय उपस्थित किये जाने पर, तेरह वोट तो युद्ध न करने के पक्ष में आये और केवल सात युद्ध करने के पक्ष में। युद्ध के वोट देने वालों में आइरकूट Eyre Coote भी था।

प्रथम तो क्लाइव अधिकांश सम्मति के अनुसार नवाब के साथ युद्ध न करने के लिए राजी हो गया, किन्तु आइरकूट के युद्ध करने के लिए बारबार अनुरोध करने पर—क्लाइव का मन विचलित हुआ और वह एकान्त में विचार करने के लिए समीपस्थ एक सघन आम्रवृक्षों के उपवन में चला गया। लौटने पर उसने अपने प्रथम विचार को बदल दिया। जिस समय प्रतापशाली रणकुशल क्लाइव ने आम्रवृक्ष के नीचे खड़े हो कर अपने प्रथम विचार को बदला था उसी समय बङ्गाल के भाग्य का निर्णय हो गया था। क्लाइव ने पुनः एक बार अपनी निर्भय वीरता का परिचय दे, अपने साथ के अफसरों पर आधिपत्य जमाया और युद्धसमिति की निश्चित की हुई सम्मति के विरुद्ध उसने अपने अधीनस्थ उस छोटी सी सेना को शत्रु की बहुसंख्यक सेना पर आक्रमण करने के लिए, दूसरे दिन प्रातःकाल होते ही नदी पार होने की आज्ञा दे दी। उसने नदी पार कर, शत्रुसेना से एक मील के अन्तर पर अपनी सेना के डेरे खड़े करवाये।

ये डेरे ऐसी बुद्धिमानी से खड़े किये गये थे कि, दूर से देखने वालों को यही प्रतीत होता था कि इन डेरों में रहने वाली सेना की संख्या बहुत अधिक है। जिस स्थान पर क्लाइव ने अपनी छावनी डाली, वह स्थान भी सुरक्षित था। सघन वृक्षों की आड़ से इस सेना की रक्षा होती थी और शत्रु सेना पर, इस स्थान से मार की अच्छी घात थी।

इतना होने पर भी क्लाइव को अपने दायित्व का बड़ा ध्यान था। जिस दिन युद्ध होने वाला था कहते हैं, उसके पूर्व रात्रि में उसको रात्रि भर निद्रा नहीं आयी। रात्रि भर क्लाइव को इसी चिन्ता ने सताया कि, दूसरे दिन उसको अपनी सेना से कहीं अधिक सेना के साथ युद्ध करना है।

सन् १७५७ ई० की २३वीं जून का प्रातःकाल बङ्गाल के इतिहास में सदा चिरस्मरणीय रहेगा। इसी दिन भारत के वाटरलू युद्ध का श्रीगणेश हुआ था। पौ फटते ही नवाव की सेना कई पंक्तियों में पंक्तिबद्ध हो कर, जहाँ क्लाइव की सेना का पड़ाव था उस ओर आक्रमण करने के लिए भीमवेग से आगे बढ़ी। यद्यपि अंगरेज़ी सेना में १००० भी ब्रिटिश जाति के योद्धा नहीं थे; तथापि सम्पूर्ण सेना का परिचालन ब्रिटिश आफिसरों द्वारा ही होता था और इसीसे अंगरेज़ी सेना में आज्ञा-पालन उचित रीति से और उचित समय पर होता था।

नवाव की सेना में देशी तोपखानों के अतिरिक्त कुछ फरासीसी तोपें भी थीं। देशी तोपखाने वैलों द्वारा खींचे जाते थे और चबूतरों पर रख कर इन तोपों से गोले छोड़े जाते थे। इन दिनों

की भाँति उस समय हार्सब्रेटरी माउण्टेन बैटरी आदि का प्रचार नहीं था। इसीसे उन देशी तोपख़ानों से ठीक ठीक काम नहीं लिया जा सकता था। इन तोपों की मार अंगरेज़ी फौजों तक नही पहुँच पाती थी। हाँ फरासीसी तोपों से निकले हुए गोले कभी कभी अंगरेज़ी फौजों के पास तक पहुंचते अवश्य थे। जब नवाबी सेना की यह दशा थी, तब अंगरेजी तोपखाने नवाब की सामने खड़ी हुई पंक्तिबद्ध सेना पर भयानक रूप से निरन्तर अग्नि वर्षा रहे थे। दोपहर तक तो तोपखानों का द्वन्दयुद्ध चलता रहा। इस बीच में बादलों ने आकर मेह बर्साना आरम्भ किया और इस वर्षा से नवाब के तोपख़ानों की बारूद और रञ्जक, जो खुले मैदान में थी भीग गयी। किन्तु अंगरेजों की बारूद आदि जो पेड़ों की छाया में थी, पानी से बच गयी। इस दैवी घटना का प्रभाव नवाब की सेना पर अधिक पड़ा। नवाब की सेना को इस दैवी घटना से पूर्ण विश्वास हो गया कि, ईश्वर भी इस समय अंगरेजों ही की ओर है। इस विश्वास के उत्पन्न होते ही, नवाबी सेना भयभीत हुई। अपने अफसरों को एक एक कर मरते देख, नवाबी सेना का उत्साह भङ्ग होने लगा और पंक्तिबद्ध नवाबी सेना के पैर उखड़े और वह पीछे खसकने लगी। परन्तु फरासीसी कंटि-जंट जोकि नवाब की मदद को आया था, पूर्ववत् बराबर अंगरेज़ी सेना का दृढ़तापूर्वक सामना करता रहा। शत्रुसेना को रणक्षेत्र से पीठ फेरते देख, अंगरेज़ी सेना की एक टुकड़ी ने आम के पेड़ों से निकल कर शत्रु सेना पर सहसा वीरगति से आक्रमण किया और जिस स्थान पर शत्रुसेना थी—वहाँ से उसको खदेड़ कर

उस स्थान पर अपना अधिकार जा जमाया। अपनी टुकड़ी को शत्रु के मोरचे पर अधिकार जमाते देख, क्लाइव ने अपनी सम्पूर्ण सेना को आगे बढ़ने की आज्ञा दी। अंगरेज़ी सेना के आगे बढ़े हुए भाग पर आक्रमण करने को शत्रुसेना का एक दल आगे बढ़ता हुआ ज्यों ही दिखलाई पड़ा, त्यों ही क्लाइव ने उस दल पर तोपें दागने की आज्ञा गोलन्दाज़ों को दी। अंगरेज़ी गोलों की अविराम वर्षा के मारे, यह दल भी तितिर बितर होकर भाग गया।

अंगरेज़ी सेना इस दल को भागते देख और भी अधिक उत्साहित हुई और आगे बढ़ कर वह ऐसे स्थान पर जाकर रुक गयी, जहाँ से वह शत्रुओं की छावनी पर गोले वर्षा सके। अंगरेज़ी गोलों की मार से शत्रुसेना का सर्वनाश होने लगा। नवाब की सेना में खलबली मच गई और वह छिन्नभिन्न हो, रणक्षेत्र से इधर उधर भाग गयी। मीर जाफर के परिचालन में जो सेना थी, केवल वही जहाँ की तहाँ अड़ी खड़ी रही। अंगरेज़ी सेना शत्रुकेम्प में घुस गई और ढूँढ़ ढूँढ़ कर शत्रुओं का नाश करने लगी। अंगरेज़ी सेना को न रोकने के लिए नवाब की सेना में यदि कोई दोषी कहा जा सकता है तो केवल मीर जाफ़र—क्योंकि मीर यदि चाहता तो अंगरेज़ी सेना का सामना करता—किन्तु उसको बङ्गाल बिहार उड़ीसा की नवाबी पाने के लालच ने ऐसा करने से रोका। सामना करना तो एक ओर रहा—अंगरेज़ों का विजय होते देख, वह उनमें जाकर मिल गया। क्लाइव ने भी उसके पिछले असद्व्यवहारों को एकदम भूल और उसको बङ्गाल का

भावी नवाव समझ सलाम किया।

प्लासी-युद्ध के अन्तिम परिणाम की आलोचना करते हुए डाक्टर पोप ने लिखा है:—

"thus Clive did in Bengal what Dupleix had done in Carnatic"

अर्थात् डूपले जिस नीति का अवलम्वन कर करनाटक में सफल हो चुका था, क्लाइव ने वङ्गाल को हस्तगत करने में उसी नीति का अवलम्वन किया।

पाठको ! मीरजाफ़र और कलकत्ते की अंगरेज़ी कौंसिल का रचा हुआ, सिराजुद्दौला के विरुद्ध षडयन्त्र सफल हुआ। मीर जाफ़र विहार-उड़ीसा-वङ्गाल का नवाव वनाया गया, परन्तु वङ्गाल के नये नवाव वास्तव में अंगरेज़ों के हाथ के कठपुतले थे। ऐसा होना कोई आश्चर्य की वात भी नहीं है, क्योंकि अंगरेज़ों की कृपा से ही मीर जाफ़र को वङ्गाल की नवावी पाने का सुअवसर प्राप्त हुआ था और अंगरेज़ों को अप्रसन्न करने से उस समय भी मीर जाफ़र को नवावी छिन जाने का भय था। हमारे पाठकों को इस वात पर अवश्य ध्यान देना चाहिए कि आरम्भ में जिन विलायती वणिकों की कंपनी का उद्देश्य केवल इस देश में अपने देश का व्यापार प्रसार करना था, वही कंपनी अपने नैतिक कौशल (Diplomacy) से किस प्रकार धीरे धीरे इस देश के आधिपत्य को हस्तगत करती जाती थी।

इस प्लासी-युद्ध का वर्णन पूर्ण करने के अर्थ अव हम इस युद्ध के एकमात्र प्रधान पात्र सिराजुद्दौला के जीवन

की शेष घटनाओं का उल्लेख करना भी अत्यन्त आवश्यक समझते हैं।

प्लासी-क्षेत्र में जिस समय दोनों सेनाओं में घमसान लड़ाई हो रही थी, उस समय अपनी सेना का उत्साह घटते देख और उस तुमुल युद्ध के भीषण भविष्य पर दृष्टिपात कर, नवाब सिराजुद्दौला अपने मन में डरा। वह रणभीरु और अदूरदर्शी नवाब अपनी सेना को नष्ट होते हुए छोड़ और अपने प्राणों को अपने सैनिकों के प्राणों की अपेक्षा बहुमूल्य समझ और अपने कर्त्तव्य को एकदम बिसार कर चुपके से मुर्शिदाबाद को भाग गया। मुर्शिदाबाद पहुँच कर उसने एक पिटारी में बहुत से बहुमूल्य रत्नों को रखा और उसे अपने साथ ले वहाँ से पटना को रवाना हुआ। कुछ दिनों बाद सिराजुद्दौला के एक पुराने शत्रु ने जिसकी उसने नाक काट ली थी मीर जाफ़र को उसका पता बतलाया, और वह पकड़ा गया। जब सिराजुद्दौला जो कुछ दिनों पूर्व स्वयं बङ्गाल का नवाब था; बङ्गाल के नये नवाब के सामने उपस्थित किया गया, तब उस समय जो भाव उन दोनों के हृदयों में उत्पन्न हुए होंगे उनका विचार मात्र, सरल एवं कोमल हृदय में, करुणा उत्पन्न करने की, अब भी शक्ति रखता है। किन्हीं कारणों से क्यों न हो—मीर जाफ़र ने अपने भूतपूर्व अन्नदाता के वध की आज्ञा नहीं दी—किन्तु मीर जाफर के दुष्ट पुत्र मीरन ने सिराजुद्दौला की अन्तिम कष्टमय-जीवन-लीला को समाप्त कर दिया। सिराजुद्दौला ने बङ्गाल की केवल १५ मास नवाबी कर पायी थी और २० वर्ष की अवस्था पूर्ण होने के पूर्व ही

उसको अपने किये हुए कुकर्मों का अत्यन्त कठोर दण्ड भी यहीं मिल गया।

मिस्टर हालवेल के शब्दों में, यदि वह "महानिर्दय और ज़ालिम नवाब" सिराजुद्दौला—यह जानता होता कि, यह वसुन्धरा किसी की नहीं है, यह अनित्य है, यह अचला है—इसके पाने के अर्थ—अपने साथियों को, अपनी पुत्रवत् प्रजा को कष्ट देना व्यर्थ और अन्याय है—तो कदाचित् वह निरपराधियों के शोणित से अपने हाथों को कलङ्कित न करता। यदि नवयुवक सिराजुद्दौला यह जानता होता कि, वह न्यायवान् सर्वव्यापी, अन्याय करने वालों के पापों का फल कालान्तर में अवश्य देता है, तो वह कदाचित "कालकोठरी"—ऐसी निर्दयतापूर्ण घटनाओं का नायक बन अपनी आत्मा को कलङ्कित कर के, नरक की दारुण यन्त्रणाओं को भोगने के लिए उपक्रम न रचता। यदि ईश्वर-भय-रहित, वह शून्य हृदय सिराजुद्दौला यह जानता होता कि, प्रजा को भी परमात्मा ने किसी प्रकार को शक्ति प्रदान को है, तो कदाचित् उसको अपनी ही प्रजा के रचे हुए षड्यंत्र द्वारा इस प्रकार अपमानित हो, नष्ट न होना पड़ता। यदि अपरिणामदर्शी और युवावस्था के मद में मत्त—नवाव सिराजुद्दौला को यह ज्ञात होता कि, इस जीवन के अनन्तर आत्मा को मर्त्यलोक में किये हुए निज कर्मानुसार यश-अपयश यथा कीर्ति अथवा अपकीर्ति रूपी शरीर में चिरकाल तक निवास करना पड़ता है, तो कदाचित वह इतने दिनों वाद भी लोगों का घृणापात्र बनने के भय से निष्ठुर अमानुषिक कर्म करने में प्रवृत्त न होता।

परन्तु—नवयुवक मदमत्त सिराजुद्दौला तो नवावी को कुछ और ही समझता था। पाठको! इसीसे नवाव सिराजुद्दौला का अन्तिम परिणाम विवेकी पुरुषों की दृष्टि में एक शोचनीय घटना है।

प्लासी-युद्ध के विजयियों को इस युद्ध के अवसान में—लूट खसोट में वहुत सा द्रव्य हाथ लगा। प्लासीयुद्ध के समाप्त होते ही दूसरे दिन मीर जाफ़र के वङ्गाल के सूवेदार अथवा नवाव होने की घोषणा घोशित करवायी गयी। मीर जाफ़र ने नवावी पाने पर क्लाइव और उसके साथियों को वहुत सा द्रव्य भेंट में दिया। किन्तु जव वेचारे अमीचन्द—नहीं नहीं, अभागे अमीचन्द की, अपना हिस्सा पाने की वारी आयी, तव उसको पिछली चालाकी का सारा वृत्तान्त सुनाया गया। इस वृत्तान्त को सुन कर अमीचन्द की जो दशा हुई, वह केवल अनुमानगम्य है। वहुत दिनों से अभिलषित वस्तु के पाने की आशा लगाये हुए मनुष्य को, अवसर प्राप्त होने पर ईप्सित वस्तु की अप्राप्ति से, जो मनोवेदना होनी सम्भव है, उससे कहीं अधिक मनोवेदना इस वृत्तान्त को सुनकर, अमीचन्द के हृदय में उत्पन्न हुई। अमीचन्द की वहुत दिनों की लगाई आशालता पर तुषार पड़ गया। अंगरेज़ इतिहास लेखकों का कथन है कि, अभागे अमीचन्द के हृदय पर इस घटना से ऐसी गहरी चोट लगी कि, वह आशाभङ्ग की असह्य भीषणता को न सह, लड़खड़ा कर वैठ गया। उसको संसार अन्धकारमय प्रतीत होने लगा।

अंगरेज़ इतिहास-लेखकों ने यह भी लिखा है कि, अमीचन्द की यह दशा देख क्लाइव को अमीचन्द पर दया भी आयी थी

और पीछे से उसने इस बात की चेष्टा भी की थी कि अमीचन्द को भी कुछ दिया जाय। क्लाइव ने अमीचन्द की सिफारिश करते हुए लिखा था:—

"As a person capable of rendering great services and therefore not wholly discarded'—Dr Pope.

किन्तु जिस क्लाइव के हाथ में उस समय सब कुछ था उसके अनुरोध करने पर भी अमीचन्द को कुछ न मिलना और प्रत्युत अमीचन्द के निर्दोष घर वालों के साथ नवाबी प्रथानुसार अत्याचार होना—"अवश्यमेव भोक्तव्यं कृतं कर्म शुभाशुभम्" के अटल सिद्धान्त का एक जाज्वल्यमान उदाहरण है।

अमीचन्द के प्रति पीछे से जो ऊपरी कृपाएँ दिखलायी गयीं, उनका परिणाम कुछ भी न हुआ। उसके हृदय पर जो चोट लगी थी, उसका सांघातिक प्रभाव उत्तरोत्तर बढ़ता ही गया। अन्त में अमीचन्द विक्षिप्त हुआ और कुछ मास बाद, वह मर भी गया। क्लाइव के इस अनुचित व्यवहार के विषय में, डाक्टर पोप लिखते हैं:—

Clive thus degraded himself by his duplicity & injured that reputatain for strict integrity as well as stated, is one of the most essential element of success."

अर्थात् क्लाइव ने अपनी कुटिल नीति के वशवर्ती हो कर अपने पद को स्वयं नीचे गिरा दिया और अपनी उस सत्य कीर्ति को कलङ्कित किया जिसका किसी व्यक्ति विशेष में रहना अथवा राज्य में वर्त्तमान होना सफलता का प्रधान अङ्ग समझा जाता है। अस्तु, क्लाइव को बङ्गालविजय के उपलक्ष में तीन

लाख पौंड मिले; साथ ही उसको कई जागीरें भी मिलीं। लोग कहते हैं, इन जागीरों की आय का अधिक भाग उसके स्थापित "Lord Clive Fund" में जाता था। इस फंड द्वारा कंपनी के आहत और असमर्थ नौकरों की सहायता की जाती थी।

यद्यपि क्लाइव को लोग द्रव्य का लालची नहीं बतलाते; तथापि इस प्रकार अनुचित रीति से इतना धन लेना, केवल अन्य जाति वालों की दृष्टि में ही नहीं किन्तु, लार्ड क्लाइव के सजातीयों को भी अच्छा प्रतीत नहीं हुआ। वे तो इस विषय में यहाँ तक लिखते हैं कि, केवल क्लाइव के इस कुकृत्य ही से अंगरेज़ जाति पर अन्य लोगों की दृष्टि में धव्वा लगा है।

"These immense sums receivd in his irregular way demoralised the man who rceived them and lowered Englishman in the eyes of all men."

इस अवसर पर क्लाइव ने केवल अपनी जेब ही नही भरी किन्तु कंपनी को भी क्षतिपूर्ण रूप बहुत सम्पत्ति दिलवायी। जो नगर बङ्गाल में अब चौबीस-परगने के नाम से प्रसिद्ध है, वह एक समय कंपनी की ज़िमीदारी में आ गया था। इस नगर के दानपत्र की तारीख २० दिसंबर सन् १७५० ई० है।

कंपनी के डाइरेक्टरों ने क्लाइव को बङ्गाल के अपने उपनिवेशों का गवर्नर नियुक्त किया और वह भी अपने देश के हित-साधन में तत्पर हुआ। उसने फरासीसियों के विरुद्ध एक सेना करनाटक के उत्तर भाग में भेजी। इस सेना द्वारा अच्छी सफ-

लता प्राप्त हुई। इसी सेना ने मीर जाफ़र और पटना के गवर्नर रामनरायण को शाह आलम से बचाया। शाह आलम ने इन दोनों को राज्य छीन लेने को धमकी दी थी। इसी सेना द्वारा क्लाइव ने बङ्गाल में डचों की शक्ति को भी उन्मूलन किया।

सन् १७६० ई० में क्लाइव दूसरी बार इङ्गलेंड वापिस गया। वहाँ पहुँचते हो उसके ऊपर पुरस्कार और बहुमान की घनघोर वर्षा हुई। वह आयरिश पीयर (Irish Peer बनाया गया और उसको लार्ड (Lord) एवम् बेरन (Baron) की उपाधियाँ मिलीं। तत्कालीन इङ्गलेंड के युवक किङ्ग तृतीय जार्ज और वाग्मिवर पिट तथा अंगरेज़ जाति ने, क्लाइव का बड़ा सम्मान किया। क्लाइव की कामना थी कि वह आयरिश के बदले इङ्गलिश पियर बनाया जाय। क्लाइव ने इस विषय में अपने एक पत्र में लिखा था।

"If health had not deserted me on my arrival in England in all probabilty, I should have been an English peer instead of an Irish one with the promise of a red riband. I know I could have bought the title (which is usual) but that I was above and the honors I have obtained are free and voluntary"

क्लाइव के इस पत्र से स्पष्ट विदित होता है कि इङ्गलेंड से सुसभ्य देश में भी किसी समय सम्मान पाने वाले के गुणों का विचार कर उपाधियां वितरित नहीं की जाती थीं, किन्तु गुण न होने पर भो और धन पास होने ही से कोई भी मनुष्य पदवियाँ पाने का अधिकारी बन सकता था।

सर जान मालकम (Sir John Malcolm) ने क्लाइव की वार्षिक आय ४०,००० हज़ार पौंड अर्थात् छः लाख रुपये कूती थी। जिन दिनों का हम यह वृत्तान्त लिखते हैं उन दिनों ३४ वर्ष की अवस्था वाले मनुष्य के लिए, जिसके पास चौदह वर्ष पूर्व एक अल्प मासिक वृत्ति को छोड़, अन्य कुछ भी निज का नहीं था—यह आय अवश्य ही बहुत कही जा सकती है।

पाठको ! धन पाकर जो लोग केवल अपने नाशवान् शरीर के भोगरोग ही में उस धन को व्यय करना जानते हैं; धनवान् होने पर भी जो लोग अपने धनहीन पड़ोसियों की यंत्रणाओं पर कर्णपात नहीं करते और धनाभाव से दुःखित अपने आत्मीय सम्बन्धियों के धनकष्ट को नहीं मैंटते, ऐसे लोगों का धनवान् होना न होना बराबर है। क्लाइव धनवान् होने पर भी धन की सार्थकता को भली भाँति समझता था। क्लाइव के धन से और उसकी उदार प्रकृति से उसके आत्मियों ने लाभ उठाया। वह अपने पिता को आठ सौ पौंड (अर्थात १२,००० रुपये), अपनी बहनों तथा अन्य सम्बन्धियों और मित्रों को सब मिलाकर २०,००० पौंड (अर्थात् तीन लाख रुपये) वार्षिक दिया करता था। इतना ही नहीं, धनसम्पन्न होने पर वह अपने पुराने मित्र मेजर लारेंस को भी नहीं भूल सका था। मेजर लारेंस को वह ५०० पौंड अर्थात ७५००) रु० प्रति वर्ष देता था। अपते मित्र के प्रति क्लाइव का यह उदार व्यवहार अत्यन्त श्लाध्य है। इन दिनों क्लाइव जैसे उदार मित्र का मिलना प्रायः दुर्लभ है।

इस वार भी विलायत लौटने पर क्लाइव पार्लियामेंट के झगड़े में पड़ गया; किन्तु इस वार वह सफल मनोरथ हुआ। वह श्रूसवरी (Shrewsbury) की ओर से पार्लियामेंट में मेंवर नियुक्त हुआ। किन्तु अपने देश की राजनैतिक मण्डली में उसका विकास न हो सका। इसका कारण अंगरेज इतिहास-लेखक यह वतलाते हैं कि, क्लाइव की मनोवृत्ति सदैव भारतवर्ष सम्वन्धी विषयों के विचार की ओर लगी रहती थी। यह अनुमान हमको भी ठीक प्रतीत होता है। क्योंकि जिस देश में रह कर क्लाइव—साधारण क्लाइव, एक वकील का अत्यन्त उत्पाती पुत्र क्लाइव; अपने देश में इतना गौरवान्वित हुआ, वह कृतज्ञ क्लाइव भला इस देश को किस प्रकार भूल सकता था! जिस समय क्लाइव पार्लियामेंट में प्रविष्ट हुआ, उस समय वह लिवरल अथवा 'विग' दल की ओर झुका था, अनन्तर वह मिस्टर फ़ाक्स से मिल गया। फिर मिस्टर पिट की अद्वितीय प्रतिभा ने उसको अपनी ओर आकर्षित किया ओर अन्त में वह मि० ग्रेनविल (Granville) से मिला। दशान्तर को प्राप्त होने पर भी भारतवर्ष को वह न भूल सका। क्लाइव का स्वभाव अव ऐसा हो गया था कि वह ईस्ट इण्डिया कंपनी के मामलों से अधिक समय व्यतीत करने लगा था। कंपनी के अपना प्रभाव वढ़ाने को उसने अपने पास का वहुत सा धन व्यय करके कंपनी के शेयर्स मोल लिये थे।

कंपनी के डाइरेक्टरों में सलीवन नाम के एक व्यक्ति थे। वह क्लाइव से वड़ी ईर्ष्या करते थे। यद्यपि प्रकट में ये दोनों मिले हुए से जान पड़ते थे; तथापि इन दोनों के हृदय में ईर्षाग्नि धधका

करता था। कंपनी के डाइरेक्टरों का चुनाव प्रति वर्ष होता था। सन् १७६३ ई० में जब कंपनी के डाइरेक्ठरों के चुनाव का समय आया, तब हृदय के भीतर धधकती हुई ईर्ष्याग्नि वाहर फूट कर निकली। क्लाइव ने इस बात का प्रयत्न किया कि, सलीवन इस बार कंपनी का डाइरेक्टर न चुना जाय। किन्तु क्लाइव को इसमें सफलता प्राप्त नहीं हुई। सलीवन इस वर्ष भी कंपनी का डाइरेक्टर चुना गया। जो अग्नि अब तक इन दोनों के हृदय मन्दिरों में जल रहा था, वह अब प्रकाश रूप से बाहर भी जलने लगा। सलीवन भी क्लाइव से बदला लेने की घात जोहने लगा। क्लाइव ने सोते हुए विषधर को, लात की मार से जगा अपने मन की अमूल्य शान्ति को स्वयं नष्ट किया। अब खुल्लंखुल्ला दाव पेंच खेले जाने लगे। दोनों की एकमात्र यही कामना थी कि एक दूसरे को नीचा दिखलावें। अन्त में सलीवन का चक्र घूम गया। कंपनी के बोर्ड आफ डाइरेक्टर्स ने अधिकांश सम्मति (Majority of votes) से एक मन्तव्य पास किया। उसके अनुसार उसके निज की जो ज़िमीदारी बङ्गाल में थी, क्लाइव को उस ज़िमीदारी की आमदनी का दिया जाना बंद कर दिया गया। वास्तव में यह वही ज़िमीदारी थी, जिसको मीर जाफ़र ने लार्ड क्लाइव को भेंट में दिया था। भेंटपत्र में कंपनी से सम्बन्ध युक्त क्लाइव का नाम होने से ही क्लाइव की ज़िमीदारी की आमदनी का अपहरण किया जाना—बोर्ड आफ डाइरेक्टर्स का ठीक न्याय नहीं कहा जा सकता।

जिस समय मीर जाफर, अकर्मण्य स्वार्थलोलुप मीर

जाफ़र आलमगीर के भय से भीत हो कर, अपने ऐश्वर्य के शीघ्र नष्ट होने की चिन्ता में दग्ध हो रहा थां, उस समय सहायता करके क्लाइव ने मीर जाफ़र की चिन्ता मेंटी थी। इसी उपकार के प्रत्युपकार में मित्रोचित उदारता का परिचय देते हुए, नवाबी प्रथा के अनुसार मीर जाफ़र ने क्लाइव को यह जिमींदारी भेंट की थी। जिस समय यह जिमींदारी क्लाइव ने भेंट में पायी, उस समय तक कंपनी के डाइरेक्टरों ने कोई ऐसी आज्ञा नहीं निकाली थी कि जिसमें कंपनी के कर्मचारियों को ऐसी भेंट लेने का निषेध किया गया हो। इतने दिनों बाद डाइरेक्टरों का इस विषय की मीमांसा करना और भेंट की उपयोगिता का निश्चय करना, असङ्गत और अन्याय युक्त था। इन सब विषयों के पूर्वापर को विचार कर प्रतिद्वन्द्वी को हराने की कामना से, क्लाइव ने डाइरेक्टरों में पास किये हुए मन्तव्य के विरुद्ध "चान्सरी" मे एक बिल उपस्थित किया।

इंगलैंड में जब भारतवर्ष की 'शासन समिति' (Governing Body) में इस प्रकार गड़बड़ी मची हुई थी, तब क्लाइव के भारतवर्षीय उत्तराधिकारी की अक्षमता और अयोग्यता से बङ्गाल प्रान्त की दशा शोचनीय हो रही थी। क्लाइव के उत्तराधिकारी का नाम वेनसिटार्ट (Vansitart) था। उसमें पदोचित योग्यता का अभाव था। जो जहाज यहाँ से लौट कर स्वदेश जाते वे इस देश के कुप्रबन्ध की खबरें इङ्गलेंड-निवासियों को सुनाते थे। उस समय इस देश के अधिकांश भाग का शासन कंपनी के अयोग्य कर्मचारियों के हाथ में था। ये लोग कंपनी के लाभ की बात को एकदम भूल कर, अपनी अपनी जेबें भरने लगे थे।

ऐसे ही कारणों से कंपनी की सम्पत्ति बढ़ने पर भी, उसके साझीदारों को नाममात्र का लाभ होता था।

इस देश में नित्यप्रति विप्लवों की संख्या बढ़ी—अराजकता और अन्याय की मात्रा बढ़ी—साथ ही कंपनी की प्रतिष्ठा घटी और कंपनी के कर्मचारियों का भय यहाँ की प्रजा के हृदय में घटा। अतः मीर जाफ़र पर कंपनी का ऋण नित्य प्रति बढ़ता गया। अन्त में बङ्गाल के अंगरेज़ गवर्नर ने, मीर जाफ़र को अयोग्य समझ नवाबी से उतार और उसके दामाद मीर क़ासिम को चालाक समझ, बङ्गाल की नवाबी छोड़ देने के लिये नवाब मीर जाफर पर नवाबी से 'इस्तेफा' देने का दबाव डाला। अन्त में मीर जाफर ने इस्तेफा दिया और कलकत्ते में जीवन के शेष दिन बिताना पसंद किया। इससे जान पड़ता है कि मीर जाफ़र बड़ा दूरदर्शी था। कलकत्ते में रहना पसन्द करने में मीर जाफर ने भविष्य में अपना कल्याण समझा। मीर जाफ़र को मीर क़ासिम की कपटयुक्त प्रकृति का भली भाँति ज्ञान था। उसको मालूम हो गया था कि, मीर क़ासिम के नवाब होने पर बङ्गाल की दुर्दशा अवश्य ही होगी और यदि मैं मीर क़ासिम के पास रहूँगा, तो मेरी वही दशा होगी जो दशा निरपराधी हंस की चालाक काक के साथ रहने से हुई थी। अस्तु—सन् १७६० ई० को २७वीं सितम्बर को मीर क़ासिम बङ्गाल का नवाब हुआ। नवाब होने पर उसने अंगरेज़ों को मिदनापुर, चिटगाँव और बर्दवान भेंट किये। इतना पाने पर भी कंपनी के स्वार्थलोलुप कर्मचारियों को सन्तोष नहीं हुआ। मीर क़ासिम के साथ अंगरेज़ों

का विवाद चल पड़ा। इसी का परिणाम "पटना का ग़दर" हुआ पटना के ग़दर में जैसे भीषण अत्याचार मीर क़ासिम ने किये, उनको स्मरण करके मनुष्य के मन में कठोरता की पराकाष्ठा का पूरा, अनुभव हो जाता है। इसी ग़दर में पटना का गवर्नर राम-नरायण गले में वोझा वांध कर, श्रीगङ्गा की गोद में सुलाया गया। अंगरेज़ों के अन्य सेठ साहूकार मित्रों की भी वही गति हुई, जो रामनारायण की की गयी थी। दो कम डेढ़ सौ क़ैदी, अंगरेज़ों की गोलियों के शिकार वने। अन्त में अंगरेज़ों ने पटना पर अपना अधिकार जमाया और मीर क़ासिम अवध के नवाव शुजाउद्दौला के पास चला गया।

इन सव घटनाओं की ख़वर जव इङ्गलैंड पहुँची, तव तो कंपनी का आसन दोलायमान होने लगा। चारों ओर क्लाइव के नाम की रटन्त होने लगी। स्वार्थतत्पर कंपनी के डाइरेक्टरों ने क्लाइव के जागीर वाले मामले को ठण्डा कर दिया और उसको भारतवर्ष का गवर्नर वना कर पुनः यहाँ भेजना निश्चय किया।

"वोर्ड आफ़ डाइरेक्टरों" के जिस अधिवेशन में क्लाइव को भारतवर्ष भेजना निश्चय हुआ था, आरम्भ में उस अधिवेशन में वड़ा हलचल मचा। लोगों को आरम्भ में यह विश्वास नहीं था कि क्लाइव भारतवर्ष की तृतीय यात्रा करना स्वीकार करेगा। लोगों को क्लाइव के उदार और गम्भीर स्वभाव का ज्ञान नहीं था। प्रतिद्वन्द्वी सलीवन की वातों के फेर में पड़ कर जिस वोर्ड ने क्लाइव को भारी आर्थिक क्षति पहुँचायी उसी वोर्ड के प्रस्ताव को क्लाइव इतनी सरलता से स्वीकार कर लेगा, इसका विश्वास

प्रथम किसी को नहीं था । किन्तु नहीं, जब क्लाइव से डाइरेक्टरों ने अपनी इच्छा प्रकट की तब उसने केवल यह कह कर उसे स्वीकार कर लिया कि यदि उसका प्रतिद्वन्द्वी सलीवन, बोर्ड की प्रेसीडेंटी से हटा दिया जाय तो उसको भारतवर्ष की गवर्नरी स्वीकार करने में कुछ भी आपत्ति नहीं होगी । इस पर बोर्ड में बड़ी सनसनी फैली—क्योंकि जिस सलीवन को डाइरेक्टरों ने इतना मुँह लगा लिया था कि उसकी बातों में वे विवेक शून्य हो जाते थे, उस सलीवन को पदभ्रष्ट करना बड़ी कठिनाई का सामना करना था । किन्तु अन्त में निरुपाय हो तथा अपनी आँखों पर ठिकरी रख कर डाइरेक्टरों को सलीवन को प्रेसीडेंटी से पृथक करना ही पड़ा और सन १७६५ ई० में क्लाइव कंपनी से पूर्ण अधिकार प्राप्त करके, तीसरी बार भारतवर्ष के लिए रवाना हुआ । जो लोग अपने एकमात्र नीच स्वार्थ के वशीभूत हो देश भर के गौरव को मिट्टी में मिला देना कुछ भी नहीं समझते, जो अपने एकमात्र नीच स्वार्थ के वशीभूत हो देश भर के अर्थ को नष्ट कर देते हैं और जो अपने एकमात्र उच्च पद प्राप्ति की क्षुद्र मनोकामना के वशवर्त्ती हो देश भर का पद नीचा कर देते हैं उन लोगों को क्लाइव से शिक्षा लेनी चाहिए । अपनी शोचनीय स्थिति को कुछ भी न समझ क्लाइव ने जब देश के गौरव को नष्ट होते देखा तब बिना किसी आपत्ति के उसने देशसेवा व्रत धारण कर लिया । इसके अतिरिक्त शत्रु से बदला लेने की कामना रखने वालों को भी, क्लाइव की प्रणाली का अनुसरण करना चाहिये । राज-नीति का यही माहात्म्य है कि अवसर मिलने पर शत्रु से बदला लेने में कभी न चूकना ।

नवम अध्याय

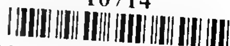
(उपसंहार)

"शस्त्राघाता न तथा सूचीक्षतवेदना यादृक्"

(क्लाइव की तृतीय भारतयात्रा का उद्देश्य—बङ्गाल की परिवर्तित दशा—क्लाइव का कंपनी के कर्मचारियों के प्रति बर्ताव—क्लाइव के शासन सम्बन्धी सुधार—शासन की कड़ाई से कंपनी के कर्मचारियों में असन्तोष—क्लाइव का निरपेक्ष बर्ताव—बङ्गाल में कंपनी का दबदबा—क्लाइव की अस्वस्थता—क्लाइव के विषय में कलकत्ते की कमिटी का मत—क्लाइव की भारत से अन्तिम बिदाई—स्वदेश में क्लाइव पर विपत्ति—हाउस आफ कामन्स में क्लाइव के भारतीय शासन की जाँच—क्लाइव के भाग्य का फैसला—क्लाइव का निर्दोषी सिद्ध होना—क्लाइव की मृत्यु-मृत्य के कारण-उपसंहार)

क्लाइव ने अपनी प्रथम भारतयात्रा में दक्षिण प्रान्त में ब्रिटिश आधिपत्य स्थापित किया, द्वितीय वार उसने उत्तरपूर्वीय प्रान्त का अधिकांश भाग अपने अधीन किया और अपनी अन्तिम तृतीय अर्थात् भारतयात्रा में, उसने कंपनी के शासन की हिलती हुई जड़ को दृढ़ करके, कंपनी के स्वार्थलोलुप कर्मचारियों का उचित शासन किया।

हमने प्रथम क्लाइव की सामरिक प्रतिभा का परिचय दिया, अनन्तर उसमें सैनिक एवम् राजनैतिक निपुणता का समावेश प्रदर्शन किया; अब हम क्लाइव की शासन सम्बन्धी



शासन सम्बन्धी योग्यता का यहाँ वर्णन करके उसकी शासन-दक्षता का परिचय देते हैं।

क्लाइव जब तीसरी बार यहाँ आया, तब उसको बड़ी कठिनाइयों का सामना करना पड़ा। कारण इसका यही था कि कंपनी के कर्मचारी अब अपने को कुछ और का और ही समझने लगे थे। क्लाइव को अब जिन कठिनाइयों का सामना करना था, वे शस्त्रबल से नहीं हटायी जा सकती थीं। पाठक क्लाइव को इस बार कंपनी के बङ्गालस्थित शिश्नोदरपरायण निरङ्कुश कर्मचारियों को उचित रीति से शासित करके, उनको संयमी बनाना था।

सन् १७६५ ई० को ३ मई को जब लार्ड हो कर, क्लाइव तीसरी बार यहाँ आया; तब इस देश में अनेक परिवर्तन हो चुके थे। उसके पुराने सुपरिचित बङ्गाल के भूतपूर्व नवाब मीर जाफ़र की मृत्यु हो चुकी थी। मीर जाफ़र का उत्तराधिकारी मीर क़ासिम भी बङ्गाल की नवाबी से निकाला जा चुका था। नाम मात्र के लिये शाहंशाह की पदवी धारण करने वाला द्वितीय शाह आलम प्रयागस्थ अङ्गरेज़ों के केम्प में था। कम्पनी के प्रायः सभी भृत्य और कलकत्ते की अङ्गरेजी कौंसिल जिसके प्रेसीडेंट मिस्टर स्पेन्सर थे, पूर्णरीति से बदनाम हो चुके थे। कंपनी के कर्मचारियों की धनलोलुपताजन्य हृदयविदारी कहानियाँ सुदूर इङ्गलेंड में रहनेवाले कंपनी के डाइरेक्टरों के कर्णकुहर में प्रविष्ट हो चुकी थीं और डाइरेक्टरों के नेत्रों के सामने, धनलोलुप कर्मचारियों की क्षुद्र-धन-लालसा के प्रतिफलों के चित्र, अङ्कित हो चुके थे।

भावी भीषण परिणाम का विचार कर, इतनी दूर बैठे हुए डाइरेक्टरों ने कंपनी के कर्मचारियों की त्रिपेक्षणा रोकने को एक आज्ञापत्र निकला था। उस आज्ञापत्र का मर्म स्पष्ट शब्दों में यही था कि, कंपनी के कर्मचारी प्रजा से अथवा किसी से 'नजरें और बक्शीसें' न लिया करें। परन्तु सात समुद्र पार से आयी डाइरेक्टरों को इस आज्ञा का पालन कंपनी के कर्मचारियों से करवाना विना एक साहसी शासक के कठिन बात थी। कंपनी के कर्मचारी निरङ्कुश होने से इतने ढीट हो गये थे कि, डाइरेक्टरों की आज्ञा के सर्वथा विरुद्ध उन लोगों ने 'नजरें और बक्शीसें' ले ले कर मीर जाफ़र के कम उम्र लड़के को बङ्गाल की नवाबी दे दी थी।

क्लाइव ने आते ही डाइरेक्टरों की उक्त आज्ञा का पालन करवाना आरम्भ किया। साथ ही शासन में इतनी कठोरता दिखलायी कि कंपनी के नौकरों को निज का व्यापार करने का भी निषेध कर दिया। स्वार्थियों के स्वार्थ में वाधा पड़ने से जो यंत्रणा उनको होती है और जिस प्रकार वे अन्तर-निहित-अग्नि की भाँति समय पाकर एकदम धधक उठते हैं—उसे भुक्तभोगी ही भली भाँति अनुभव कर सकते हैं। पाठको! ऐसी दशा में कंपनी के क्षुद्रस्वार्थ में लिप्त कर्मचारी मिल कर, यदि क्लाइव का अवरोध करें, तो आश्चर्य की बात नहीं। क्लाइव की इन कड़ाईयों ने कंपनी के कर्मचारियों में वदला लेने की इच्छा उत्पन्न कर दी। किन्तु क्लाइव की निर्भीक प्रकृति के सामने कर्म-चारीगण इस देश में सदैव नीचा देखते रहे। ये लोग नीचा

क्यों न देखते, क्लाइव तो इस बार सत्यपथ पर आरूढ़ था। इसके अतिरिक्त इस बार क्लाइव बङ्गाल का पूर्ण अधिकार प्राप्त गवर्नर हो कर आया था। उसके शब्द बङ्गाल वालों के लिए अटल आज्ञा थी। यही कारण था कि वह अपने अधीनस्थ कर्मचारियों की कुछ भी परवाह न करके अपना काम दृढ़ता पूर्वक करता ही गया। जो लोग निरन्तर झगड़ा करते करते झगड़ालू प्रकृति के हो गये थे उनको तो क्लाइव ने छाँट छाँट कर एकदम निकाल दिया और उनकी जगह मदरास से सिविलियंस बुलाकर नियुक्त किये।

प्रथम उद्योग में सफलता प्राप्त होने पर जो उत्साह उत्पन्न होता है वही उत्साह मनुष्य की उन्नति की प्रथम सीढ़ी है। क्लाइव अपने प्रथम उद्योग में सफलमनोरथ हुआ और उसने अब दूसरे कामों में हाथ लगाया दूसरी प्रथा जिसमें सुधार की बड़ी आवश्यकता थी वह यह थी कि सामरिक विभाग में जो धन की लूट होती थी उसको रोकना।

उस समय अंगरेजी पलटनें जब लाम पर जाती थीं, तब उनको "डबल भत्ता" मिलता था। यह 'भत्ता' लड़ने वालों को खुराक का दाम समझ कर दिया जाता था। परन्तु जिस समय का यह वृत्तान्त है, उस समय भारत के अन्न को निगल जाने वाली रेली ब्रादर्स एँड कंपनी यहाँ स्थापित नहीं हुई थी। यहाँ का अन्न विदेश जाता था पर इतना नहीं जाता था जितना अब प्रतिवर्ष निकल जाता है। उस समय इस देश में अन्न की प्रचुरता से अल्प आय से ही यहाँ के मनुष्यों का पेट भलीभांति

भर जाता था। केवल पेट ही नहीं भर जाता था, किन्तु उस समय के लोगों ने जो काम १०) मासिक की आय से किये, वे काम अब १५०) मासिक आयवाला भी नहीं कर सकता। इस "डबल भत्ते" की प्रथा से उस समय सैनिकों को अच्छी रक़म हाथ लगती थी। उदाहरण के लिये यदि किसी केप्टिन को एक मास तक किसी लड़ाई में रहना पड़ता तो इस 'डबल भत्ते' के हिसाब से मासिक वेतन छोड़ कर उसको लगभग एक हज़ार रुपया और मिल जाता था। क्लाइव ने इस प्रथा को भी बंद किया।

इस धनहानि को न सह कर कंपनी की सेनाओं के अंगरेज़ सैनिकों में बड़ी हलचल पड़ी। जोशीले एवं स्वार्थी सैनिकों ने क्लाइव को काम छोड़ देने की धमकी दी और २०० अफसरों ने एक ही दिन इस्तीफे दाखिल कर दिये। क्लाइव—निर्भय क्लाइव, अंगरेज़ सैनिक अफसरों की इस मानलीला से बिलकुल विचलित नहीं हुआ। प्रत्युत वह प्रत्येक आफिसर का इस्तैफा लेता गया और प्रत्येक को हिरासत में देता गया। उसने तुरन्त मदरास से अपने विश्वासपात्र मनुष्यों को बुलाकर, इन लोगों के खाली पदों की पूर्ति की। इस्तैफा देते समय इन अफसरों का कदाचित् यह विश्वास रहा होगा कि क्लाइव स्वदेशी है और स्वदेशी होने से वह हमारा पक्ष अवश्य लेगा। साथ ही वह अपनी भूल को समझ भी जायगा परन्तु जब इन लोगों ने क्लाइव को अपने विचार पर दृढ़ देखा, तब इन लोगों की सारी आशाओं पर पानी फिर गया। पन्द्रह दिन के भीतर भीतर पूर्ववत शान्ति स्थापित हो गयी। सब कर्मचारी अब

किसी मैशिनरी के पुर्जों के भाँति आप से आप नियमित रूप से और ठीक कार्य करने लगे। जो तूफान एक साथ उमड़ आया था वह एक भारी दबाव पड़ने से एक साथ दब गया।

क्लाइव ने जब देखा कि, उसका रोब सब पर छा गया है। तब उसने कर्मचारियों के वेतन और आमदनी पर विचार किया। जब यह बात उसकी समझ में आ गयी कि, कंपनी की दी हुई आर्थिक सहायता से कर्मचारियों का निर्वाह भलीभाँति नहीं हो सकता तब उसने इन लोगों की आमदनी बढ़ाने का विचार किया। किन्तु किसी का अनिष्ट करना जितना सहज है, उतना इष्टसाधन करना सहज नहीं है। यद्यपि क्लाइव का रोपित यह बीज उसके यहाँ रहते रहते अङ्कुरित नहीं हो पाया; तथापि लार्ड कार्नवालिस के समय में क्लाइव का रोपित वह बीज अङ्कुरित पल्लवित भी हुआ और कर्मचारियों के वेतन में यथेष्ट वृद्धि की गयी। क्लाइव ने जब यह देखा कि, इन लोगों की वेतनवृद्धि में अभी विलंब है तब उसने कर्मचारियों के निर्वाह का एक दूसरा उपाय निकाला। कंपनी के कर्मचारियों का निज का व्यापार रोक देने के पलटे कंपनी को निमक की आमदनी से जो लाभ होता था उसमें से कुछ अंश कर्मचारियों में Subsistence allowance के रूप में वितरित करने की क्लाइव ने व्यवस्था की। क्लाइव का यह कार्य यद्यपि दूरदर्शिता का था तथापि उसको इसके लिए पीछे बड़ी विपत्ति झेलनी पड़ी।

क्लाइव ने घर के भीतर संशोधन कर के घर के बाहर भी

संशोधन कार्य आरम्भ किया। प्रसिद्ध मुग़ल शाहंशाह बाबर के वंशधर शाह आलम, जो उस समय नाममात्र को इस देश के मालिक थे, क्लाइव ने उनसे कंपनी के नाम में बङ्गाल, बिहार तथा उड़ीसा की ज़िमींदारियों में शासन स्थापित करने को शाही फरमान निकलवाये और शाह आलम की ओर से दीवानी के अधिकार प्राप्त किये। इससे इन प्रान्तों के लोगों पर क्लाइव का बड़ा प्रभाव पड़ा। क्लाइव की शासन-प्रणाली से बङ्गाल भर में कंपनी का प्रताप चमक उठा। बङ्गाल के नवाब को ४२ लाख रुपयों पर पेंशन लेकर बङ्गाल की नवाबी छोड़ने के लिए विवश होना पड़ा। इन सब कार्यों से केवल बङ्गाल ही में नहीं किन्तु देश भर में ब्रिटिश-शक्ति का आतङ्क लोगों पर छा गया।

निरन्तर की मानसिक चिन्ता और शारीरिक परिश्रम, शीघ्र ही शरीर को निर्बल और क्षीण कर देते हैं। क्लाइव का शरीर भी इसी से अब नित्यप्रति क्षीण और दुर्बल होने लगा। उसने अब इङ्गलेंड लौट जाने का विचार दृढ़ किया। बाइस मास तक निरन्तर काम करके क्लाइव ने सन् १७६७ ई० के जनवरी मास के अन्त में, इस देश से सदैव के लिए बिदा ली। पाठको! क्लाइव रहा तो इस बार केवल बाइस ही मास परन्तु उसने इस देश में ब्रिटिश शक्ति की जड़ को दृढ़ करके चिरकाल के लिए पुष्ट कर दिया।

कलकत्ते की कमिटी ने डाइरेक्टरों को क्लाइव के प्रचारित सुधारों का उल्लेख कर, क्लाइव के यहाँ आने के पूर्व की दशा का चित्र अङ्कित करते हुए लिखा था:—

"A presidency divided headstrong and licentious (हरे राम ! ; a government without nerves a treasury without money, and service without subordination, discipline or public spirit. Amidst a general stagnation of useful Industry, of licensed commerce individuals were accumulating immense riches which they have ravished from the insulted prince and his helpless people, who groaned under the united pressure of discontent, poverty and oppression" और क्लाइव के यहाँ से सदा के लिए प्रस्थान करने के समय के बाद, इस देश की दशा का उल्लेख उक्त कमिटी ने यों किया है:-

"The present situation need not be described. The liberal supplies to China, the state of our treasury, of your inevstment, of the service and of the whole country declare it to be the strongest contrast to what it was."

क्लाइव अन्तिम बार जब यहाँ से लौट कर स्वदेश में पहुँचा तब उसकी आर्थिक दशा पहले की अपेक्षा अच्छी नहीं थी। इसका कारण यह था कि इस बार उसने जिस आज्ञा का पालन अपने अधीनस्थ कर्मचारियों से करवाया, उसका पालन अक्षरशः स्वयं भी किया था। मीरजाफ़र से भेंट में हज़ार पौंड की जो जागीर क्लाइव को मिली थी, उस जागीर को उसने कंपनी को दे डाला; परन्तु कंपनी से इस बात की लिखा पढ़ी करवा ली कि, इस जागीर की आमदनी से अशक्त और काम करने के अयोग्य सैनिक अफ़सरों और सिपाहियों को आर्थिक सहायता मिलती रहेगी।

कहते हैं तीसरी बार की भारतयात्रा में क्लाइव ने किसी की

भेंट स्वीकार नहीं की थी। इस पर भी जब वह इङ्गलेंड लौट कर गया, तब उसके स्वदेशियों ने उसकी निन्दा प्रचारित करने में कोताई नहीं की और उस सभ्य कहलाने वाले देश के रहने वालों ने उसके प्रति नाना कुवाच्यों का प्रयोग भी किया। बङ्गाल में रह कर जिन लोगों के स्वार्थ में क्लाइव ने बाधा डाली थी अब उन लोगों ने बदला लेने का सुअवसर उपस्थित देख, क्लाइव का अनिष्ट करने के लिए प्रयत्न करना आरम्भ किया। मैकाले ने लिखा है कि, इन लोगों ने क्लाइव की निन्दा इङ्गलेंड में यहाँ तक फैलाई कि, क्लाइव ने स्वयं अपनी निन्दा अपने कानों से ऐसे वयोवृद्ध लोगों के मुख से सुनी, जिनसे क्लाइव का कभी का परिचय भी न था। भारतवर्ष में रह कर क्लाइव ने जिस ठाठ के साथ गवर्नरी की थी, उसको अतिशयोक्तियों में वर्णन करते हुये, वहाँ वालों ने अपनी सम्पूर्ण विद्या बुद्धि को व्यय कर डाला। जो क्लाइव कुछ दिनों पूर्व स्वदेशियों से अलभ्य प्रतिष्ठा प्राप्त करके उनका विश्वासपात्र बन चुका था, उसी क्लाइव को, अब कुछ स्वदेशियों के नीच स्वार्थ में बाधा डालने के कारण, अविश्वासी और निन्दा का पात्र बनाने का प्रयत्न किया गया।

"अतथ्यस्तथ्यो वा हरति महिमानं जनरवः", किसी नीतिज्ञ ने ठीक ही कहा है। जिन दिनों क्लाइव के कुछ स्वदेशी भाई उससे घृणा करते और उसके साथ ईर्ष्या और द्वेष रखते थे, उन्हीं दिनों क्लाइव ने उन लोगों के द्वेषाग्नि में घी की आहुति डाली। श्रापशायर (Shropshire) और सरे (Surrey) स्थानों में क्लाइव ने क्लेरमौंट (Clarmonnt) पर बड़ी ऊँची ऊँची हवे-

लियाँ बनवा डालीं। क्लाइव के इस वैभव को देख कर, जलने वाले उसके शत्रुओं ने लोगों से कहना आरम्भ कर दिया कि, यह सब बेईमानी से उपार्जित धन के करिश्मे हैं। परन्तु जो अनपढ़ थे और जिनके हृदय में क्लाइव की नीचता और क्षुद्रता का चित्र अङ्कित किया गया था, वे लोग अपनी अपनी अशिक्षा और असभ्यता के कारण इन हवेलियों का मूलकारण भूत प्रेतों के मत्थे मढ़ने लगे। ऐसे लोगों की धारणा थी कि, बङ्गाल के जिन मृत नवाब से क्लाइव ने धन लिया है, वह भूत बन कर कहीं रात्रि में उसको उठा न ले जाय, इसी भय से क्लाइव ने बड़ी चौड़ी दीवालों से आवेष्ठित हवेलियाँ बनवाई हैं।

कुछ काल तक क्लाइव ने इसी बात की प्रतीक्षा की कि, कदाचित् समय स्वयं लोगों के भ्रमों को दूर कर दे, परन्तु जब क्लाइव के इस भाव से लोग क्रमशः यहाँ तक ढीठ हो गये कि, रास्ता चलते वे उस पर अवाज़े कसने लगे तब एक दिन हाउस आफ़ कॉमस में भारतीय विषयों पर चर्चा चल पड़ने पर क्लाइव ने खड़े होकर आत्मरक्षा के उद्देश्य से, अपने विपक्षियों पर वक्तृता द्वारा घोर आक्रमण किया।

क्लाइव ने बाल्यावस्था में पढ़ने में अनिच्छा दिखलायी थी और इसीलिए उसको कई स्कूलों में पढ़ाने का प्रयत्न भी किया गया था। इसीसे हमारे पाठक क्लाइव की विद्या सम्बन्धी योग्यता की अटकल लगा सकते हैं। परन्तु हाउस आफ कॉमस में भाषण देते हुए क्लाइव ने अपनी योग्यता का जैसा उत्कृष्ट परिचय दिया, उसकी प्रशंसा लार्ड चेटहम (Lord Chatham) ने मुक्तकण्ठ से की

हैं।* विपक्षियों के प्रचारित अपवाद की इस भाषण में क्लाइव ने ऐसी विचित्र समालोचना की कि, उसको सुनकर उसके विपक्षी लज्जित हुए और अन्य उपाय न देख, उन्होंने अमीचन्द वाले मामले को अब हरा किया। समें संशय नहीं कि, क्लाइव का यह कर्म निपट अधर्मयुक्त, उसके पद के सर्वथा विरुद्ध और जाति भर के ऊपर धब्बा लगाता है। इस मामले के उठते ही जाँच के लिए एक कमिटी नियुक्त की गयी। सिराजुद्दौला के साथ मामला छिड़ने से लेकर, बङ्गाल-विजय तक के सब मामलों की जाँच करने का काम उस कमिटी को सौंपा गया। उस कमिटी की जाँच से कई छिपे हुए रहस्यों की उधेड़ बुन हुई। कमिटी ने जाँच के समय क्लाइव की प्रतिष्ठा और पद का कुछ भी विचार न करके क्लाइव से बड़े टेढ़े टेढ़े प्रश्न किये। क्लाइव को कमिटी का यह व्यवहार बहुत गड़ा। अपनी बात समाप्त करते हुए अन्त में उसने कमिटी से साक्षेप कह भी डाला कि "कमिटी ने मुझसे वैसे ही प्रश्न किये हैं जैसे प्रश्न किसी भेड़ बकरी चुराने वाले से किये जाते हैं।"

क्लाइव को एक बड़ा भरोसा था। उसको अपने कृतकर्मों पर पूरा विश्वास था। जो कार्य उसने किये थे वे सब स्वतन्त्र

---

*Lord Chatham, who now the ghost of his former self, loved to haunt the scene of his glory, was that night under the gallery of the House of Commons and declared that he had never heard a finer speech."

—Macaulay's Lord Clive, p. 83

हो कर और निज इच्छा से किये थे । उसको कर्त्तव्य कर्म का पूरा ज्ञान था इसीसे जब जाँच कमिटी ने अपनी रिपोर्ट हाउस आफ़ कामँस में सुनायी, तब क्लाइव ने खड़े हो कर बड़े साहस के साथ अपना बचाव Defenc स्वयं किया । क्लाइव की स्पीच समाप्त होने के बाद, कुछ समय तक हाउस आफ़ कामन्स निस्तब्ध रहा, परन्तु लोगों की बुद्धि में कमिटी की रिपोर्ट ने जो विष प्रथम भर दिया था, उसका समूल नाश क्लाइव न कर सका ।

इस दृष्ट संसार में कोई ऐसा मनुष्य या कोई ऐसी वस्तु नहीं है जो सर्वथा निन्दाशून्य हो । परमात्मा को छोड़ अन्य कोई पदार्थ निन्दारहित नहीं हो सकता । अतः मनुष्य भी कभी निर्गुण नहीं हो सकता गुणयुक्त होने ही से अच्छे और बुरे गुणों का जोड़ा प्रतीत होने लगता है। मनुष्य मात्र में गुण होते हैं । किसी में थोड़े अवगुण और गुण अधिक होते हैं और किसी में गुण कम और अवगुण अधिक । इसमें सन्देह नहीं कि लार्ड क्लाइव में अवगुण थे, परन्तु यदि उसके गुण और अवगुणों की तुलना की जाय तो अवगुणों से गुण ही अधिक निकलेंगे । यह बड़े खेद की बात तो अंगरेज जाति वालों के लिए है कि जिस मनुष्य ने अपने जातीय गौरव को डूबते देख बचा लिया—जिस मनुष्य ने अपने जातीय लाभ के लिए असंख्य शत्रुओं की कुछ परवाह न कर प्राण को हथेली पर रख कर अपने को हर प्रकार से भयानक स्थिति में डाला उसी मनुष्य के साथ उसीकी जाति वालों ने अपने स्वार्थ के वशीभूत हो—

शत्रुता की और उसके प्रति इस प्रकार सर्वसाधारण में घृणा दिखलायी।

अन्त में हाउस आफ़ कामन्स में यह मत स्थिर हुआ कि क्लाइव ने ब्रिटिश कमाँडर होकर मीर जाफ़र से बहुत सा धन लिया है, किन्तु ऐसा स्थिर होते ही वेडरबर्न साहब ने प्रस्ताव किया और हाउस के एक दल ने स्वीकार भी कर लिया कि क्लाइव ने भारतवर्ष में रह कर स्वदेश के लिए प्रशंसनीय सेवा की है। अब हमारे पाठक देखें कि, हाउस आफ़ कामन्स के मत में कैसा विषम मत उत्पन्न हुआ है। जीव की मोक्ष को लोग तब मानते हैं, जब जीव के किये हुए शुभ और अशुभ कर्मों के फल परस्पर में पूरे कट जाँय और कुछ भी शेष न रहे। क्योंकि शुभाशुभ कर्म वालों की विषमता ही जीव को कर्मबन्धन में फसाती है। यहाँ हाउस आफ़ कामन्स के दो भिन्न भिन्न दलों के मतानुसार क्लाइव के किये हुए कर्मों का फल समता को प्राप्त हो गया है। अच्छे बुरे कर्मों के फल आपस में पूरे पूरे कट गये हैं। ब्रिटिश कमाँडर होकर रिशवत लेना और लार्ड क्लाइव होकर देश की प्रशंसनीय सेवा करने के समान फल हुए। अतः क्लाइव को मोक्ष मिली। क्लाइव सर्वसाधारण की दृष्टि में एक प्रकार से लाञ्छित होने से बच गया, परन्तु स्वदेशनिवासियों के ऐसे असद् व्यवहार पर उसके हृदय में जो ग्लानि उत्पन्न हुई, उसी ने क्लाइव का सर्वनाश किया।

जैसा कड़ा असानुषिक व्यवहार कमिटी ने उसके साथ जाँच के समय किया था, उसका प्रभाव क्लाइव के मन पर

पड़ा था और जो दया (Mercy) उसके ऊपर अन्त में की गयी थी वास्तव में उसकी अभिमानयुक्त प्रकृति के लिए बड़ी ही कष्टप्रद थी। मन पर प्रभाव पड़ने से उसका प्रतिफल शरीर पर पड़ना स्वभाविक बात है। अतएव उक्त घटना के अठारह मास बाद और अपने भारतवर्षीय प्रतिद्वन्द्वी डूपले की मृत्यु के दस वर्ष बाद, ४९ वर्ष २ मास को अवस्था में लार्ड क्लाइव ने २२वीं नवंबर सन् १७७४ ई० को स्वयं अपनी कुत्सित इच्छा के अनुसार शरीर परित्याग किया।

केवल इतिहास-लेखकों पर पूर्णतया निर्भर रहने वालों को आश्चर्य होगा कि, जिस क्लाइव को मरे अभी पूरे डेढ़ सौ वर्ष भी नहीं हुए, उसी क्लाइव की मृत्यु के कारण अङ्गरेज़ इतिहास-लेखकों ने भिन्न भिन्न दिखलाये हैं। अङ्गरेज़ इतिहास-लेखक जब आधुनिक विषयों के सम्बन्ध ही में एकमत नहीं हो सकते, तब इन लोगों की अनदेखी प्राचीन बतों को अनगढ़ अटकलें यदि लोगों को भ्रम में डाल दें, तो आश्चर्य ही क्या है! कोई क्लाइव की मृत्यु का कारण पिस्तौल, कोई विष और कोई छुरी बतलाता है। अङ्गरेज़ इतिहास-लेखकों की यह कैसी विडम्बना है। यही नहीं, विलायत के सभ्य जीवनी-लेखक अभी तक यह बात भी निश्चयपूर्वक नहीं कह सकते कि, क्लाइव श्रापशायर मरा अथवा लन्दन में। सभ्यदेश के लेखकों में ऐसी मोटी मोटी बातों में पृथ्वी आकाश का अन्तर होना बड़े आश्चर्य और निन्दा की बात है।

Horace Walpole के मतानुसार क्लाइव ने अफीम की

अधिक मात्रा खा लेने से आत्मघात किया। कहते हैं वह किसी रोग विशेष के शमनार्थ अफीम खाने लगा था। किन्तु ‹ il ig के कथनानुसार क्लाइव ने एक छुरी से आत्मघात किया। कहते हैं जब वह अपने बाल कटवाने वाले मकान की बैठक में बैठा था तब एक रमणी उससे मिलने को आयी। उस रमणी ने क्लाइव को एक पर की कलम और एक तीक्ष्ण छुरी उसे बनाने के लिए दी। क्लाइव ने कलम बना कर तो रमणी को लौटा दी, परन्तु छुरी को अपने हाथ में ज्यों का त्यों रखा। इसी खुली हुई तीक्ष्ण छुरी से प्लासी के जेता ने अपना गला काट कर, हृदयस्थ ग्लानि का प्रायश्चित्त किया।

बाल्यकाल ही से चञ्चल स्वभाव रावर्ट क्लाइव, एक साधारण वकील का प्रकृतसिद्ध उत्पाती क्लाइव, प्रतापशाली क्लार्क क्लाइव, आरकट दुर्ग और प्लासी-युद्ध का जेता क्लाइव और भारतवर्ष में ब्रिटिश आधिपत्य की जड़ जमाने वाला लार्ड क्लाइव—यद्यपि आज इस धराधाम पर नहीं है, तथापि उसकी स्वदेशसेवाओं की पताका अब तक उसके देश में फहरा रही है।

क्लाइव का मृत शरीर गिरजे के हाते में गाड़ा गया। यह गिर्जा वही था, जिसके शिखर पर क्लाइव ने बाल्यावस्था में एक बार चढ़ कर, अनूठी भविष्द्वाणी सुनी थी। क्लाइव भाग्यवान था, जिसका मृत शरीर भी अन्त में उसके देश में ही लगा। क्लाइव की मृत्यु के बाद थोड़े ही दिनों तक उसकी स्त्री जीवित रही। क्लाइव का सब से बड़ा लड़का एडवर्ड क्लाइव (Edward Clive), जो सन् १७५४ में उत्पन्न हुआ था, पीछे

बङ्गाल का गवर्नर हुआ और सन् १८०४ ई० में वह Earl of Powis बनाया गया।

क्लाइव की कीर्ति में जो धब्बे थे, उनको समय के अमोघ प्रवाह ने अब बहुत कुछ धो डाला है। इङ्गलेंड के निवासियों में आज से सवा सौ वर्ष पूर्व क्लाइव के विषय में जो धारणा थी, वह धारणा, अब वहाँ के लोगों की नहीं रही। जो ईर्ष्याद्वेष सवा सौ वर्ष पूर्व लोगो में था, अब वह ईर्ष्याद्वेष लोगों के हृदयों से निकल गया है और धीरे धीरे शेष भी दूर होता चला जाता है। जो क्लाइव किसी समय बुरे विशेषणों के साथ स्मरण किया जाता था, वही क्लाइव कालचक्र के प्रभाव से आज इतिहासों के पृष्ठों में योद्धा (warrior); नीतिज्ञ (Statesman); भारतवर्ष में ब्रिटिश आधिपत्य की जड़ जमाने वाला (Founder of the British Empire in India) और चतुर (Clever) बतला कर चित्रित किया जाता है।

"सर्वं यस्य वशादगात्स्मृतिपथं कालाय तस्मैनमः॥"

नोट—१८।४।३८ को सियांस में राबर्ट क्लाइव के आत्मा से उसकी मृत्यु का कारण पूँछने पर जो उत्तर मिला, वह यह है:—

The causes of my death which have been mentioned in different books, are true to some extent and many of these are false no doubt. But the real cause of my death as far I understand was the blame and suiting aflung on me

it shocked me badly and though it in the court. And yet I could not get myself left me unconvicted about this blame and free from the thought. I tried to suicide myself many a time but at each occasion while I was ready to kill me I changed my idea and thus only the shock brought me the natural death.

सूचना

इस पुस्तक की आईन के अनुसार रजिष्टरी हो चुकी है कोई महाशय इसको छापने अथवा भाषान्तर करने का, बिना आज्ञा पाये साहस न करें।

च० द्वा० प्र० शर्म्मा

